घरेलू हिंसा और इस्लाम

डॉ० मुहम्मद रज़ीउल-इस्लाम नदवी

विषय-सूची

	पृष्ठ सं॰
दो शब्द	5
प्रस्तावना	7
महिला उत्पीड़न का सिलसिला	9
महिला उत्पीड़न : प्राचीन काल में	9
महिला स्वतन्त्रता आन्दोलन के परिणाम	10
औरत फिर भी जुल्म का शिकार रही	11
अध्याय-1 : घरेलू हिंसा और वर्तमान परिस्थिति	13
घरेलू हिंसा की आधुनिक परिभाषा	13
घरेलू हिंसा की विभिन्न शक्लें	13
मौजूदा दुनिया की गम्भीर समस्या	14
हालात का जाइज़ा और सुधार की आलमी कोशिशें	15
दस देशों में संयुक्त राष्ट्र का सर्वेक्षण	16
दूसरे देशों का जाइज़ा	18
अध्याय-2 : घरेलू हिंसा की रोक थाम के लिए वर्तमान क़ानून	21
संयुक्त राष्ट्र के प्रयास	21
भारत का क़ानून	22
मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की	23
ग़लत जाँच, ग़लत इलाज	24
अध्याय-3 : घरेलू हिंसा रोकने के लिए इस्लाम के उपाय	25
1. मर्द और औरत एक-दूसरे के मददगार हैं, न कि मुख़ालिफ़	25
2. अधिकारों में समानता और स्वाभाविक कार्य-विभाजन	26
3. मर्द की ज़िम्मेदारी परिवार की हिफ़ाज़त और निगरानी	28
शब्द 'क़व्वाम' का मतलब	29

क़ुरआन के टीकाकारों की व्याख्याएँ 31
मर्द को 'क़व्वाम' बनाए जाने की वजहें 32
(क) ईश्वर-प्रदत्त (नैसर्गिक) श्रेष्ठता 33
(ख) अनैसर्गिक श्रेष्ठता 39
निगहबान, न कि दारोग़ा 42
4. औरत को पति के आज्ञानुपालन की ताकीद 43
5. मर्द को पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार अपनाने का निर्देश 47
6. औरतों के प्रति हिंसा न अपनाने के स्पष्ट आदेश 48
7. अनुचित हिंसा पर शौहरों को सज़ा दी जाएगी 51
अध्याय-4 : ग़ैरों के सितम, अपनों की मेहरबानियाँ 52
औरत की नाफ़रमानी और सरकशी की सूरत में
सख़्ती करने और सज़ा देने की इजाज़त 52
'नुशूज़' क्या है? 52
शौहर का 'नुशूज़' 53
बीवी का 'नुशूज़' 54
'नुशूज़' का हल 56
सुधार के उपाय 57
बिस्तर पर अलग होने का मतलब 57
मारने का मक़सद तंबीह करना है न कि हिंसा 59
सुधार के उपाय अपनाने में चरणबद्धता 61
न मारना बेहतर है 63
मारने का हुक्म निन्दनीय नहीं 64
मुस्लिम बुद्धिजीवियों की सोच 67
सन्दर्भ (हवाले) 73

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह दयावान कृपाशील के नाम से"

दो शब्द

इस्लाम जगत् के पालनहार की ओर से रहती दुनिया तक सारे इनसानों के लिए एक पूर्ण जीवन-व्यवस्था है, जिसमें मानव-जीवन के सभी पहलुओं से सम्बन्धित और मानव-समाज में पेश आनेवाली सम्पूर्ण समस्याओं के बारे में स्पष्ट और बुद्धिसंगत मार्ग-दर्शन प्रदान किया गया है। ख़ुदा की किताब क़ुरआन मजीद और ख़ुदा के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की हदीस का अध्ययन करने से पता चलता है कि जहाँ इसमें इनसान और उसके पैदा करनेवाले ख़ुदा के बीच मौजूद सम्बन्ध और रिश्ते को कुछ नियमों और क़ानूनों का पाबन्द बनाया गया है, वहीं इसमें इनसानों के आपसी सम्बन्धों और मामलों को भी कुछ नियमों और ज़ाब्तों का पाबन्द बनाया गया है। इसी लिए आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक रहन-सहन की समस्याओं से लेकर पारिवारिक, सामाजिक और नैतिक मामलों तक हर पहलू से क़ुरआन और ख़ुदा के पैग़म्बर (सल्ल॰) की जीवनी में भरपूर मार्ग-दर्शन मौजूद है।

मानव-जीवन या मानव-समाज का प्रारम्भ एक परिवार से होता है, और परिवार के बनने-बनाने में सबसे प्रमुख और महत्त्वपूर्ण रोल पति-पत्नी यानी मर्द-औरत या माँ-बाप का होता है, वही एक परिवार की बुनियाद रखते हैं और उसे आगे बढ़ाते हैं।

इस्लाम में पति-पत्नी के सम्बन्धों पर बहुत अधिक ज़ोर दिया गया है, और इस बारे में बहुत ही स्पष्ट मार्ग-दर्शन किया गया है। इसके जहाँ बहुत से कारण हैं, वहीं एक बड़ा कारण यह भी मालूम होता है कि पति-पत्नी परिवार के बनानेवाले होते हैं और उनके बीच पाकीज़ा ताल्लुक़ एक अच्छे परिवार के बनने-बनाने के लिए ज़रूरी है, जबकि पति-पत्नी के बीच सम्बन्धों में मौजूद अरुचि और अप्रसन्नता के हानिकारक प्रभाव उनके ज़रिए से बननेवाले पूरे परिवार पर पड़ते हैं। इसी लिए शादी व तलाक़ की

समस्याएँ हों, गुज़ारे-भत्ते और बच्चों से सम्बन्धित मसले हों, या एक कुशल वैवाहिक जीवन के मार्ग-दर्शक-नियम हों, ये सारे ही मामले इस्लाम में बहुत ही स्पष्ट रूप से बयान कर दिए गए हैं, और ख़ुदा के पैग़म्बर (सल्ल॰) और उनके प्रिय साथियों (रज़ि॰) ने इनका अति उत्तम और व्यावहारिक नमूना भी पेश कर दिया है।

बाद के ज़माने में कुछ मुस्लिम-समाज की कमज़ोरियों और फिर कुछ ग़लत प्रकार की परम्पराओं के चलन पा जाने के नतीजे में पारिवारिक जीवन व्यवस्था और पति-पत्नी के अधिकारों और कर्त्तव्यों के बारे में इस्लाम का स्वरूप धुंधला होता चला गया, और एक समय ऐसा भी आया, जैसा कि विगत कई शताब्दियों से सारे संसार में देखा जा रहा है, और आज यह दुष्प्रचार और अधिक तीव्र हो गया है कि इस्लाम और उसकी इस्लामी शिक्षाओं में औरतों को उनके वैध अधिकारों से वंचित रखा गया है, उन्हें मौलिक मानवीय अधिकार तक प्राप्त नहीं हैं, इस्लाम के नज़दीक पति एक स्वच्छन्द शासक होता है जबकि पत्नी केवल शासित और दासी, वग़ैरा विभिन्न प्रकार के आरोप आज इस्लाम के सिर थोपे जाते हैं। जबकि इस्लाम के अध्ययन से पता चलता है कि इस्लाम औरतों को एक समान मानवीय मौलिक अधिकार उपलब्ध कराता है, हाँ ज़िम्मेदारियों और कर्तव्यों के सिलसिले में उनकी शारीरिक संरचना और उनकी सामर्थ्य को देखते हुए कुछ रिआयतें और सहूलतें प्रदान करता है, जो न केवल प्राकृतिक और स्वाभाविक हैं बल्कि मानव-बुद्धि उनकी माँग भी करती है।

डॉ॰ रज़ीउल-इस्लाम नदवी की इस किताब "घरेलू हिंसा और इस्लाम" में न केवल यह कि इस्लाम पर होनेवाले पति-पत्नी से सम्बन्धित उन मिथ्या आरोपों की वास्तविकता पर बातचीत की गई है, बल्कि इस्लाम की साफ़-सच्ची शिक्षाओं को भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आशा है कि इससे समुचित लाभ प्राप्त किया जाएगा।

–नसीम अहमद ग़ाज़ी फ़लाही
सेक्रेट्री
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट (दिल्ली)

प्रस्तावना

उलूमुल-क़ुरआन संस्थान (अलीगढ़, यू॰पी॰) पिछले कई वर्षों से किसी भी ज्वलंत एवं महत्वपूर्ण विषय पर सेमिनार का आयोजन करता रहता है और उसके ज़िम्मेदार लोग मुझे भी इसमें शामिल होने के लिए आमंत्रित करते रहते हैं। 20-21 नवम्बर, सन् 2009 ई॰ को संस्थान ने 'पारिवारिक व्यवस्था और क़ुरआनी शिक्षाएँ' के विषय पर सेमिनार का आयोजन किया। मैंने इसके लिए प्रथमतः (उर्दू में) 'मर्द की क़व्वामियत का मफ़हूम और उसकी ज़िम्मेदारियाँ' अर्थात् पुरुष के सिरधरा होने का अर्थ और उसकी ज़िम्मेदारियों के विषय पर लेख तैयार किया था। उसमें ज़िम्मेदारियों के अन्तर्गत 'औरत की तादीब, यानी औरत को 'अदब सिखाने और सुधारने' की वार्ता के दौरान ज़रूरत महसूस हुई कि इसपर विस्तार से वार्ता की जाए। अतः मस्तिष्क में एक नए लेख की रूप-रेखा उभरकर सामने आई जो 'घरेलू हिंसा, वर्तमान के क़ानून और इस्लामी शिक्षाएँ' के शीर्षक से लेख के रूप में सामने आई और यही लेख सेमिनार में पढ़ा गया। इस अवधि में पहले लिखा गया लेख त्रैमासिक उर्दू पत्रिका 'तहक़ीक़ाते-इस्लामी' अलीगढ़ में प्रकाशित हो गया। सेमिनार में लेख को पेश करने के बाद कुछ साथियों ने लेख की विषयवस्तु को ख़ास और वक़्त की ज़रूरत बताते हुए इसे किताब के रूप में प्रकाशित करने की मुझे सलाह दी। अतः मैंने उस लेख का पुनरावलोकन किया और उसमें कुछ सुधार भी किया। सबसे पहले लिखा गया लेख 'मर्द की क़व्वामियत' के ज़रूरी हिस्सों को शामिल करते हुए कुछ और ज़रूरी बातों में अभिवृद्धि की गई। जहाँ-जहाँ ज़्यादा संक्षेप और अस्पष्टता महसूस हुई वहाँ स्पष्ट और विस्तार किया गया। इस तरह यह पुस्तक तैयार हो गई, जो आप पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है।

घरेलू हिंसा वर्तमान समय की गम्भीर समस्याओं में से एक समस्या है।

दुनिया के तमाम राष्ट्र इससे परेशान हैं और इसपर नियंत्रण पाने के लिए जी-जान से प्रयासरत हैं और विभिन्न तरीक़े अपना रहे हैं। लेकिन, बाह्य रूप में इस समस्या के हल होने की कोई सूरत नज़र नहीं आ रही है। ऐसी परिस्थिति में इस्लाम उनका सहायक और उद्धारक बनकर सामने आता है। मुझे पूरा विश्वास है कि अगर इस्लामी शिक्षाओं को व्यावहारिक रूप में अपनाया जाए तो इस समस्या पर अच्छी तरह नियंत्रण पाया जा सकता है।

किताब के अन्त में एक नाज़ुक बहस "औरत को अदब सिखाना और सज़ा देना" के सम्बन्ध में छेड़ी गई है। कुछ लोग इस्लाम की इस शिक्षा पर आपत्ति करते हैं और कहते हैं कि इस्लाम ने भी औरत पर हिंसा को जारी रखा है। इस आपत्ति पर इस्लाम के कुछ नामलेवा लोग विवशता प्रकट करते हुए इधर-उधर की व्याख्याएँ करने लगते हैं। किताब में दोनों रवैयों का आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है।

आशा है कि इस किताब से विचाराधीन समस्या की गम्भीरता और इसके हल में इस्लाम की भूमिका भी उभरकर सामने आएगी। अल्लाह से दुआ है कि इस ख़िदमत को क़बूल करे और इसका लाभ आम लोगों तक पहुँचाए।

–मुहम्मद रज़ीयुल-इस्लाम नदवी

महिला उत्पीड़न का सिलसिला

मर्द और औरत को प्रकृति ने कुछ विशिष्ट ज़िम्मेदारियाँ सौंपी हैं और उनको अच्छी तरह से पूरा करने के लिए उन्हें विशिष्ट गुण, विशेषताओं और योग्यताओं का बहुत बड़ा हिस्सा प्रदान किया है। स्त्री का बुनियादी काम बच्चों की पैदाइश, उनका लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा और घर के अन्दर के इन्तिज़ामों को ख़ूबी के साथ पूरा करना है। इसलिए उसके अन्दर प्यार-मुहब्बत, स्नेह, करुणा एवं सुन्दरता और मृदुलता का दरिया बहा दिया है, किन्तु उसे शारीरिक संरचना की दृष्टि से कुछ कमज़ोर बनाया गया है। मर्द की ज़िम्मेदारियों में औरत की रक्षा और भरण-पोषण, उसकी ज़िन्दगी की ज़रूरतों को पूरा करना, रोज़गार की मुश्किलों का सामना और भाग-दौड़ और अन्य इसी तरह के घर से बाहर के बहुत-से काम रखे गए हैं, इसी लिए उसे शक्तिशाली बनाया गया है और उसे महिलाओं की अपेक्षा अधिक शारीरिक शक्ति प्रदान की गई है।

महिला उत्पीड़न : प्राचीन काल में

इस अन्तर और विशिष्टता को दृष्टि में न रखने की वजह से मर्दों ने आमतौर से औरतों के बुनियादी अधिकारों का हनन किया है। उनको दबाकर रखा है, उनका शोषण किया है और उनपर जुल्म और अत्याचार के पहाड़ तोड़े हैं। औरत सदियों से ज़ुल्म का शिकार रही है। दुनिया की बहुत-सी सभ्यताओं और समाजों में उसे मर्द से कमतर हैसियत दी गई है। यूनानी और रूमी सभ्यताओं में उसे दुनिया की बहुत-सी आफ़तों और मुसीबतों की जड़ समझा जाता था। हिन्दू सभ्यता में वह मर्द की सेविका और एक अतिरिक्त अस्तित्व मानी जाती थी। अतः पति का देहान्त हो जाता तो वह ख़ुद ही अपने आपको आग के हवाले कर देती थी या उसे ज़बरदस्ती ज़िन्दा जला दिया जाता था। जीते जी भी वह हर प्रकार के ज़ुल्म और ज़्यादती का शिकार रहती थी।

इस्लाम से पूर्व अरबों के कुछ क़बीलों में लड़कियाँ अपमान और शर्म का कारण समझी जाती थीं। अतः पैदा होते ही उन्हें ज़िन्दा दफ़न कर दिया जाता था। यहूदी और ईसाई मत औरत को गुनाह की उत्प्रेरक, बुराई की जड़, पाप-कार्यों का स्रोत और नरक का द्वार कहते थे। उनकी धारणा यह थी कि समस्त इनसानी मुसीबतों की शुरुआत औरत के व्यक्तित्व से हुई है और वह दुनियावालों पर लानत और मुसीबत लेकर आई है। अतएव इस दृष्टिकोण के आधार पर औरत यूरोपीय देशों में, जहाँ ईसाई धर्म को बड़े पैमाने पर बढ़ावा हासिल हुआ, एक लम्बी अवधि तक अपने मौलिक अधिकारों से वंचित रही।

महिला स्वतन्त्रता आन्दोलन के परिणाम

यूरोप में मौलिक अधिकारों (Fundamental Rights), मानव अधिकारों (Human Rights) और समानता के अधिकारों (Rights of Equality) के लिए आन्दोलन चलाए गए तो उनका क्षेत्र महिला अधिकारों तक फैल गया। पहले औरतें तमाम अधिकारों से वंचित थीं। उन्हें मर्दों के अधीन और शासित समझा जाता था। वे शिक्षा से वंचित रखी जाती थीं, यहाँ तक कि कुछ वर्ग उनके इनसान होने पर भी संदेह करते थे। इन आन्दोलनों और आंदोलनों के परिणाम-स्वरूप उन्हें पहले शिक्षा का अधिकार प्राप्त हुआ। उन्होंने प्राथमिक, माध्यमिक और फिर उच्च और मेडिकल और प्रोफ़ेशनल शिक्षा प्राप्त की। फिर उन्हें अन्य सामाजिक, क़ानूनी और राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुए।

महिला स्वतन्त्रता आन्दोलन के ध्वजावाहकों ने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि औरतें ज़िन्दगी की दौड़ में मर्दों के समान हैं, अतः उन्हें भी तमाम मैदानों में मर्दों के समान ही अधिकार मिलने चाहिएँ। जैसे-जैसे औरतों में ख़ुद को पहचानने का एहसास पैदा होता गया, वैसे-वैसे महिला आन्दोलनों में तीव्रता आती गई और उनकी माँगों की सूची भी लम्बी-से-लम्बी होती गई। हर तरह की आज़ादी की माँग की जाने लगी। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर बनाया और उन्हें नौकरी के अवसर प्राप्त हुए।

कहा गया कि उनका काम सिर्फ़ पतियों की सेवा, बच्चों की परवरिश और घरों की देखभाल करना नहीं है। नौकरियों ने मर्दों पर उनकी निर्भरता को कम-से-कम किया और उनमें यह एहसास पैदा किया कि पारिवारिक व्यवस्था में वे मजबूर और मर्दों पर आश्रित नहीं हैं।

औरत फिर भी जुल्म का शिकार रही

इन महिला आंदोलनों के नतीजे में वैसे तो देखने में औरत को बहुत-से अधिकार मिल गए, लेकिन पारिवारिक व्यवस्था बुरी तरह बिखराव और बदहाली का शिकार होकर रह गई। वैवाहिक संस्था (Marital Institution) की नींव हिल गई, बदकारी और आवारगी को बढ़ावा मिला। इनसानी नस्ल के बाक़ी और जारी रहने के लिए मर्द-औरत का लैंगिक सम्बन्ध ज़रूरी था, जिसे विवाह के पवित्र रिश्ते से मज़बूत किया गया था, किन्तु महिला स्वतन्त्रता के नतीजे में अब इसकी ज़रूरत न रही। औरत को इख़्तियार मिल गया कि वह किसी भी मर्द के साथ, जब तक चाहे बिना विवाह के रह सकती है और जब चाहे उससे अलग हो सकती है। विवाह का मक़सद पति-पत्नी की यौनेच्छा सन्तुष्टि और सन्तान प्राप्ति था, लेकिन अब औरत इसकी पाबन्द न रही। उसकी मरज़ी के बिना अब न पति उससे लैंगिक सुख प्राप्त कर सकता था और न औलाद प्राप्त करने की इच्छा कर सकता था। सन्तान को जन्म देने, उसे दूध पिलाने और घर की देख-भाल करने में व्यस्त रहने के कारण अब तक वह कमाने और जीवन के साधन जुटाने की चिन्ता से मुक्त थी और उसे सुरक्षा प्रदान करने और उसके लिए आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराने की ज़िम्मेदारी मर्द पर थी; अब वह अपनी मालिक ख़ुद बन गई। मर्द का उसपर ज़ोर और उसकी मर्द पर निर्भरता ख़त्म हो गई। अतः अब मर्द को इतना भी अधिकार न रहा कि वह औरत से कोई ऐसी बात कह सके जो उसकी नाज़ुक तबीअत पर भारी गुज़रे। औरत में यह एहसास जाग उठा कि जब उसके और मर्द के तमाम अधिकार बराबर और एक समान हैं तो वह मर्द की बड़ाई और प्रधानता क्यों स्वीकार करे।

महिला स्वतन्त्रता आन्दोलन से औरतों को हालाँकि कुछ फ़ायदे हासिल

हुए हैं, लेकिन इसका सबसे बड़ा नुक़सान यह हुआ कि उसने मर्दों और औरतों को एक-दूसरे के मुक़ाबले में ला खड़ा किया। पारिवारिक व्यवस्था में दोनों की हैसियत सहभागी दोस्त (Partner) और सहायक मित्र (Ally) की थी और दोनों को मिलकर सभ्यता की गाड़ी खींचनी थी, जिसके लिए क़ुदरत की तरफ़ से दोनों में एक-दूसरे से मुहब्बत, हमदर्दी, अपनापन और दुख बाँटने की भावनाएँ डाली गई थीं, महिला स्वतन्त्रता आंदोलन ने दोनों को प्रतिद्वन्द्वी और प्रतिस्पर्धी (Rival) बना दिया और अपने लिए ज़्यादा-से-ज़्यादा अधिकार हासिल करना और दूसरे वैध अधिकारों को भी स्वीकार न करना इस आंदोलन का लक्ष्य बन गया।

फिर जब मर्द और औरत दोनों प्रतिद्वन्द्वी बन गए तो मर्द अपने अधिकार प्राप्त करने और औरत पर अपना प्रभाव जमाने में पीछे क्यों रहे। इसके लिए उसने अपने बाहुबल का भी प्रयोग किया। घर की चारदीवारी में यूँ भी बाहर के लोगों का ज़ोर नहीं चलता और व्यवहारतः प्रभुत्व मर्द को ही हासिल रहता है। अतएव मर्द ने अपने इस प्रभुत्व का घर में अच्छी तरह प्रयोग किया। औरत जब ज़बानी चेतावनी और डाँट-डपट के ज़रिए उसके क़ाबू में नहीं आई तो उसने अपनी ताक़त का इस्तेमाल शुरू कर दिया। मार खाना औरत का भाग्य बन गया। प्राचीन काल में भी वह मर्द की तरफ़ से शारीरिक यातनाओं की शिकार थी और आधुनिक युग में भी उसके अधिकारों की लम्बी सूची (Index) बन जाने के बावजूद उसे तकलीफ़ों से राहत न मिल सकी।

अध्याय-1

घरेलू हिंसा और वर्तमान परिस्थिति

घरेलू हिंसा की आधुनिक परिभाषा

महिला अधिकारों के ध्वजावाहकों ने औरत के उत्पीड़न का जाइज़ा लेने, उसमें सुधार पैदा करने और औरत को उससे छुटकारा दिलाने के लिए एक ख़ास शब्द (Term) बनाया है, और वह है 'घरेलू हिंसा' (Domestic Violence)। इससे वे क्या मतलब लेते हैं, इसका अनुमान इसकी परिभाषा से लगाया जा सकता है। अमेरिका की एक सरकारी संस्था U.S. Office on Violence Against Women ने घरेलू हिंसा की यह परिभाषा दी है—

"Pattern of abusive behaviour in any relationship that is used by one partner to gain or maintain power and control over another intimate partner."[1]

"दो क़रीबी लोग (यानी मर्द व औरत) जो किसी भी रिश्ते में जुड़े हुए हों, उनमें से एक की तरफ़ से बदसुलूकी का रवैया, जो वह दूसरे के मुक़ाबले में ताक़त और उसपर नियंत्रण प्राप्त करने या बाक़ी रखने के लिए ज़ाहिर करे।"

शब्दों के मामूली फ़र्क़ के साथ यही परिभाषा ब्रिटेन की सरकारी संस्था The Children and Family Court Advisory and Support Services Domestic Violence Assessment Policy के दस्तावेज़ में भी मिलती है।[2]

यह परिभाषा यूँ तो एक साथ रहनेवाले किसी भी मर्द और औरत पर लागू हो सकती है, चाहे उनके नज़दीक कोई भी रिश्ता हो। लेकिन आम तौर से इससे मुराद वे मर्द और औरत लिए जाते हैं जो वैवाहिक बंधन में बँधकर या उसके बग़ैर पति-पत्नी की तरह रहते हैं।

घरेलू हिंसा की विभिन्न शक्लें

घरेलू हिंसा की विभिन्न शक्लें बताई गई हैं। यह शारीरिक (Physical)

भी हो सकती है कि दोनों में से कोई एक किसी को शारीरिक तौर पर तकलीफ़ दे, उसे मारे-पीटे जिससे उसका बदन ज़ख़्मी हो जाए। यह लैंगिक (Sexual) भी हो सकती है कि उसकी मरज़ी के बग़ैर ज़बरदस्ती उससे यौन सम्बन्ध बनाए। यह आर्थिक (Financial) भी हो सकती है कि वह जो कुछ कमाए दूसरा पक्ष उसपर क़ब्ज़ा कर ले और उसे अपनी मरज़ी से ख़र्च न करने दे। यह सामाजिक (Social) भी हो सकती है कि उसे अपने से तुच्छ समझे और दूसरों के सामने उसे रुसवा (अपमानित) करे। यह भावनात्मक (Emotional) भी हो सकती है कि कोई ऐसा काम करे जिससे दूसरे पक्ष की भावनाएँ उत्तेजित हों, उसे ग़ुस्सा आए या वह रंजो-ग़म का शिकार हो जाए। यह मनोवैज्ञानिक (Psychological) भी हो सकती है कि उसे डराए-धमकाए या अपनी बातों से उसे किसी दूर के अन्देशों में डाल दे। ये सारी शक्लें घरेलू हिंसा के दायरे में आती हैं।

मौजूदा दुनिया की गम्भीर समस्या

सामाजिक तौर पर देखें तो मौजूदा दुनिया की एक बहुत गम्भीर समस्या घरेलू हिंसा है। कोई देश इससे बचा हुआ नहीं है। सभी समाजों, नस्लों और वर्गों में यह आम है। सन् 1999 ई॰ में 35 देशों में कराए गए सर्वे से स्पष्ट हुआ था कि 52 प्रतिशत औरतें ज़िन्दगी में कभी-न-कभी अपने Intimate partners (यानी पति या जिनके साथ वे पत्नी की तरह रहती हैं) की तरफ़ से हिंसा का शिकार हुई थीं। कुल मिलाकर देखा जाए तो दुनिया की एक तिहाई (1/3) औरतें घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। World Health Organisation (WHO) की एक रिपोर्ट बताती है कि पूरी दुनिया में क़त्ल होनेवाली औरतों में से 40 प्रतिशत ऐसी होती हैं जिनके क़त्ल करनेवाले उनके पति या पुरुष मित्र (Boy Friend) होते हैं। World Bank की एक रिपोर्ट में औरतों की मौत के कारणों में घरेलू हिंसा को कैंसर की तरह ख़तरनाक ठहराया गया है। इस रिपोर्ट पर संयुक्त राष्ट्र (United Nations) के एक प्रतिनिधि Yakin Erturk ने Special Rapporteur on Violence against Women) में इस प्रकार रौशनी डाली है—

"Violence against women is a universal phenomenon that persist in all countries of the world, and the perpetrators of the violence are often welknown to their victims."[6]

"औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा एक वैश्विक (Universal) सच्चाई है जो संसार के समस्त देशों में पाई जाती है। इस हिंसा के करनेवाले आम तौर से पीड़ितों के अपने जाननेवाले होते हैं।"

हालात का जाइज़ा और सुधार की आलमी कोशिशें

पिछली सदी के सातवें दशक से महिला आंदोलनों की ओर से औरतों के ख़िलाफ़ घरेलू हिंसा के मसले पर ध्यान दिया गया और इसे एक वैश्विक समस्या (Global Problem) की तरह प्रस्तुत किया गया। संयुक्त राष्ट्र ने इस मसले को अपने हाथ में लिया और इससे सम्बन्धित विभिन्न प्रस्ताव पास किए और सदस्य देशों को इनका पाबन्द करने की कोशिश की।

सन् 1992 ई॰ में U.N. Commission on the Status of Women ने एक स्पेशल वर्किंग ग्रुप बनाया और उसे अधिकार दिया कि वह "औरतों के विरुद्ध हिंसा पर घोषणा" (Declaration on Violence against Women) का एक ड्राफ़्ट तैयार करे।

सन् 1993 ई॰ में U.N. Commission for Human Rights ने एक प्रस्ताव मंज़ूर किया, जिसमें मानव-अधिकारों के उल्लंघन और हिंसा की तमाम शक्लों, ख़ास तौर पर औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा, की निन्दा की गई थी।

इसी वर्ष वियाना में मानवाधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय कांफ्रेन्स आयोजित हुई, जिसमें औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा का अन्त करने के लिए व्यापक योजना तैयार की गई। इस मौक़े पर एक घोषणा-पत्र पारित किया गया जिसे "औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा को ख़त्म करने की घोषणा" (Declaration on the Elimination of Violence against Women) का नाम दिया गया। इसमें कहा गया था कि संयुक्त राष्ट्र और उसके सदस्य-देश सार्वजनिक जीवन और निजी जीवन दोनों में औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा, यौन शोषण और

क़ानूनी व्यवस्था में लिंगभेद को समाप्त करने के लिए काम करेंगे। यह घोषणा-पत्र अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों का पहला दस्तावेज़ था, जिसमें घरेलू हिंसा को विषय बनाया गया था। इसमें ज़ोर देकर यह बात कही गई थी कि घरेलू हिंसा औरत के मानवाधिकारों और उसको प्राप्त मौलिक स्वतन्त्रता के विरुद्ध है।

सन् 1994 ई॰ में U.N. Commission for Human Rights ने एक प्रस्ताव पास किया कि एक Special Rapporteur की नियुक्ति की जाए, जो घरेलू हिंसा के कारणों और परिणामों का निरीक्षण करे। इसका काम यह निश्चित किया गया कि वह समष्टीय रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर औरतों के विरुद्ध होनेवाली हिंसा के आंकड़े इकट्ठा करके विश्लेषण करे और हिंसा को रोकने के उपाय बताए।

सन् 1995 ई॰ में बीजिंग (चीन) में 4th World Conference on Women आयोजित हुई। इसमें औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा को एक नाज़ुक और गम्भीर समस्या ठहराया गया, जिसपर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है। उस वक़्त के संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी जनरल बुतरस ग़ाली (Boutros Ghali) ने परिस्थिति की गम्भीरता का ज़िक्र करते हुए कहा था—"औरतों के विरुद्ध हिंसा एक वैश्विक समस्या है, जो निरन्तर बढ़ रही है।" इस अवसर पर हिंसा रोकने के लिए Platform for Action का सुझाव दिया गया।

सन् 1996 ई॰ में संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली ने U.N. Trust Fund स्थापित किया, जिसका उद्देश्य औरतों के विरुद्ध हिंसा रोकने के लिए विभिन्न उपाय करना था।

दस देशों में संयुक्त राष्ट्र का सर्वेक्षण

सन् 1997 ई॰ में संयुक्त राष्ट्र ने औरतों के विरुद्ध हिंसा के सम्बन्ध में दुनिया के दस देशों का सर्वे कराया। इस सर्वे की रिपोर्ट The WHO Multi-Country Study on Women's Health and Domestic Violence against Women के नाम से प्रकाशित हो चुकी है। इस रिपोर्ट ने विश्व-स्तर पर औरतों के विरुद्ध हिंसा को नुमायाँ करके पेश किया है। इसलिए इसका

सारांश बयान कर देना उचित लगता है।

इस सर्वे का मक़सद यह जाइज़ा लेना था कि औरतों पर उनके इंटीमेट पार्टनर (Intimate Partrner) की तरफ़ से कितनी हिंसा होती है और इसका उनके स्वास्थ्य पर कितना असर पड़ता है? सर्वे में जिन देशों को शामिल किया गया, उनके नाम ये हैं :

(1) बांग्लादेश (2) ब्राज़ील (3) इथोपिया (4) जापान (5) नामीबिया (6) पेरू (7) सामवा (8) सरबिया व मोंटिनीग्रो (9) थाइलैण्ड (10) तंज़ानिया। सर्वे के लिए इन्हीं देशों को क्यों चुना गया? इसकी वजह रिपोर्ट यह बताती है कि वहाँ औरतों के विरुद्ध हिंसा के आंकड़े पहले मौजूद नहीं थे और स्थानीय तौर पर वहाँ स्त्री-हिंसा के विरुद्ध कई दल (Anti-Violence Groups) कार्य कर रहे थे, जो ये आंकड़े परिस्थिति के सुधार और हिंसा की रोक-थाम के लिए इस्तेमाल कर सकते थे, और यह भी कि वहाँ ऐसा राजनीतिक माहौल भी पाया जाता था, जो इस समस्या को अच्छी तरह हल कर सकता था।

इन दस देशों के पन्द्रह स्थानों पर 24000 औरतों से हिंसा की विभिन्न शक्लों (शारीरिक, लैंगिक और मनोवैज्ञानिक इत्यादि) से सम्बन्धित प्रश्न किए गए। इसके नतीजे में यह बात खुलकर सामने आई कि इन सभी देशों में, जिनमें सर्वेक्षण किया जा रहा था, घरेलू हिंसा बड़े पैमाने पर हो रही है। इसका अनुपात सबसे कम (15 प्रतिशत) जापान में और सबसे ज़्यादा (71 प्रतिशत) बांग्लादेश, इथोपिया, पेरू और तंज़ानिया में है। अधिकतर देशों में हिंसा का अनुपात 29 प्रतिशत से 62 प्रतिशत के बीच था।

शारीरिक हिंसा में थप्पड़ मारना, कोई वस्तु फेंककर ज़ख़्मी कर देना, लात-घूँसे मारना, डण्डे से पिटाई करना और बन्दूक़ या किसी दूसरे हथियार से नुक़सान पहुँचाना। यौन-हिंसा में औरत की मरज़ी के ख़िलाफ़ या उसे डराकर यौन सम्बन्ध बनाना। मनोवैज्ञानिक हिंसा में अपमानजनक और उपेक्षापूर्ण व्यवहार करना तथा डराना-धमकाना शामिल हैं। सर्वे से यह भी मालूम हुआ कि आमतौर से 15 से 19 साल की औरतें शारीरिक एवं यौन-हिंसा का अधिक शिकार होती हैं। यह बात भी सामने आई कि हिंसा से

औरतों के स्वास्थ पर गम्भीर प्रभाव पड़ते हैं। उनके शरीर के अंगों पर ख़राशें और चोटें आती हैं। आँख, नाक, कान ज़ख़्मी हो जाते हैं। हड्डी टूट जाती है और वे बेहोश हो जाती हैं। अधिकांश औरतों को गर्भावस्था में भी पीटा गया जिसके नतीजे में उनकी दिमाग़ी सेहत भी प्रभावित हुई। अतः उनमें से बहुतों ने मार खाने के बाद आत्महत्या का इरादा किया।

इस सर्वे का खुलासा औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा के स्पेशल रिपोर्टर– Yakin Ertusk के शब्दों में यह है–

> "This study challenges the perception that home is a safe heaven for women by showing that women are more at risk of experiencing violence in intimate relationship than anywhere else."[4]
>
> "यह अध्ययन इस धारणा को चैलेंज करता है कि घर औरतों के लिए सुरक्षित जगह है। इसलिए कि इससे स्पष्ट होता है कि औरतों के लिए दूसरों की तुलना में अपने निकटतम सम्बन्धियों की तरफ़ से हिंसा का अधिक ख़तरा रहता है।"

दूसरे देशों का जाइज़ा

यह सिर्फ़ गिनती के कुछ देशों का मामला नहीं है, बल्कि दुनिया के तमाम देश इस चिन्ताजनक परिस्थिति से गुज़र रहे हैं। इनमें वे देश भी हैं जिनके नागरिकों की सांस्कृतिक और सामाजिक समझ ज़्यादा ऊँची नहीं है, और वे देश भी हैं जिन्हें आज के ज़माने में संस्कृति और सभ्यता का नायक समझा जाता है। हर जगह औरतें बुरी तरह हिंसा और ज़ुल्म का शिकार हैं, और उनपर ज़ुल्म ढानेवाले कोई और नहीं उनके पति, पूर्व पति, ब्वॉय फ़्रेन्ड या दूसरे क़रीबी लोग हैं।

सन् 2002 ई॰ में WHO की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, इस्राइल, दक्षिणी अफ़्रीक़ा और अमेरिका में किए गए अध्ययनों से पता चला कि हत्या की गई औरतों की 40 प्रतिशत से 70 प्रतिशत संख्या उन औरतों की थी जो अपने निकटतम साथी (Intimate Partner) के द्वारा क़त्ल की गईं।

कुछ अन्य सर्वे रिपोर्टों से मालूम होता है कि जो औरतें अपने घरों में

क़रीबी लोगों, जैसे पतियों के द्वारा हिंसा का शिकार होती हैं उनका अनुपात स्वीडन में 70 प्रतिशत, जॉर्जिया में 50 प्रतिशत, डोमिनिकन रिपब्लिक (Dominican Republic) में 48 प्रतिशत, बोट्सवाना (Botswana) में 60 प्रतिशत, बारबाडोस (Barbados) में 30 प्रतिशत, मिस्र में 34 प्रतिशत और न्यूज़ीलैंड में 35 प्रतिशत है।

यूरोपीय देशों में घरेलू हिंसा की बिगड़ती हुई स्थिति को नज़र में रखते हुए सन् 2002 ई॰ में काउंसिल ऑफ़ यूरोप ने घरेलू हिंसा को पब्लिक हेल्थ इमर्जेंसी घोषित कर दिया था।

पूरी दुनिया में घरेलू हिंसा की जितनी घटनाएँ दर्ज होती हैं, उनमें से एक-तिहाई संख्या अमेरिका और ब्रिटेन की होती है। सन् 2000 ई॰ में किए गए एक सर्वे के अनुसार अमेरिका में हर साल लगभग 13,00,000 (तेरह लाख) औरतें अपने निकटतम साथियों (Intimate partners) के द्वारा शारीरिक हिंसा और तकलीफ़ पहुँचाने का शिकार होती हैं।[5]

सन् 2000 ई॰ में जितनी औरतें हथियारों के द्वारा क़त्ल की गईं उनकी दो-तिहाई संख्या उन औरतों की थी, जिन्हें क़त्ल करनेवाले उनके निकटतम साथी (Intimate partners) थे। U.S Department of Justice के अनुसार सन् 1998 ई॰ से सन् 2002 ई॰ के बीच फ़ैमिली मेम्बर्स के विरुद्ध हिंसा की 35 लाख घटनाएँ दर्ज की गईं। इनमें से 49 प्रतिशत घटनाएँ पति-पत्नियों (Spouses) के ख़िलाफ़ हिंसा की थीं और उनमें भी 84 प्रतिशत संख्या उन औरतों की थी जो मर्दों के हाथों हिंसा और दुर्व्यवहार का शिकार हुई थीं। अपने जोड़े के साथ दुर्व्यवहार के आरोप में जो लोग जेल में बन्द थे उनमें से 50 प्रतिशत वे लोग थे जिन्होंने अपने जोड़े को क़त्ल कर दिया था और क़त्ल होनेवालों में अधिकांश संख्या औरतों की थी।[6]

सन् 1992 ई॰ की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ इंग्लैण्ड में घरेलू हिंसा का शिकार होनेवाली 25 प्रतिशत औरतें थीं।[7]

पुलिस में दर्ज होनेवाले हिंसात्मक अपराधों (Violence Crimes) में से 25 प्रतिशत से ज़्यादा घरेलू हिंसा से सम्बन्धित होते हैं। क़त्ल होनेवाली

औरतों में से 40 से 45 प्रतिशत वे औरतें होती हैं जिन्हें क़त्ल करनेवाले उनके पुरुष साथी (Male Partners) होते हैं।[8]

कुछ समय पहले की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ इंग्लैण्ड और वेल्स (Wales) में हर सप्ताह दो औरतें वर्तमान या पूर्व निकटतम साथी (Intimate partner) के द्वारा मार दी जाती हैं और प्रति मिनट घरेलू हिंसा का एक मामला दर्ज किया जाता है।[9]

स्कॉटलैंड में सन् 2006-2007 ई॰ में घरेलू हिंसा के लगभग 49,000 मामले दर्ज किए गए। इनमें से 87 प्रतिशत मामले ऐसे थे जिनमें औरतें हिंसा और ज़ुल्म का शिकार बनी थीं और उनमें भी 90 प्रतिशत घटनाएँ प्रभावित औरतों के घर में घटित हुई थीं।

हमारे उपमहाद्वीप का मामला भी इससे भिन्न नहीं है। मानवाधिकार सतर्कता (Human Rights Watch) की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ पाकिस्तान में 90 प्रतिशत औरतें अपने घरों में शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और यौन हिंसा का शिकार बनती हैं। मानवाधिकार आयोग पाकिस्तान् (Human Rights Commission of Pakistan) की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ सन् 1993 ई॰ में पंजाब राज्य में घरेलू हिंसा के 400 मामले दर्ज किए गए, जिनमें से आधे मामले पत्नियों के क़त्ल के थे।

U.N. Population Fund की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ भारत में 70 प्रतिशत शादीशुदा औरतें 15 से 49 साल की उम्र में घरेलू हिंसा का शिकार बनती हैं। उनकी पिटाई की जाती है और उनके साथ बलात् यौन सम्बन्ध बनाया जाता है। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिदिन 14 औरतें अपने पतियों के हाथों मौत का शिकार होती हैं। भारत के National Crime Record Bureau से पता चलता है कि पुलिस रिकार्ड के अनुसार हर तीन मिनट में एक औरत के साथ जुर्म होता है और हर छः घंटे में एक शादी-शुद औरत की पिटाई से मौत हो जाती है, या उसे ज़िन्दा जला दिया जाता है या आत्महत्या पर मजबूर किया जाता है।

घरेलू हिंसा की रोकथाम के लिए वर्तमान क़ानून

संयुक्त राष्ट्र के प्रयास

घरेलू हिंसा की इस अत्यन्त गम्भीर परिस्थिति ने समाज-सुधारकों, राजनीतिज्ञों, क़ानून बनानेवाली हस्तियों और उसे लागू करनेवाली संस्थाओं, सबको परेशान कर रखा है और वे इसके निवारण के लिए जी-जान से लगे हुए हैं।

सन् 1999 ई॰ से प्रतिवर्ष संयुक्त राष्ट्र की ओर से 25 नवम्बर को महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा को रोकने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय दिवस के रूप में मनाया जाता है, जिसमें इस मामले में जागरूकता लाने और घरेलू हिंसा की रोक-थाम के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र की ओर से इस विषय पर कई विश्व स्तरीय कान्फ़्रेंसें आयोजित हुई हैं। कई प्रस्ताव पास किए गए और सदस्य देशों को महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा रोकने के लिए क़ानून बनाने की ताकीद की गई है। इस मैदान में अब तक कितने क़दम उठाए गए हैं इसका अन्दाज़ा संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी जनरल की एक रिपोर्ट से लगाया जा सकता है, जो उन्होंने सन् 2006 ई॰ में इन-डेप्थ स्टडी ऑन ऑल फ़ॉर्मस् ऑफ़ वायलेंस अगैंस्ट वीमेन (In-depth Study on all Forms of Violence against Women) शीर्षक से पेश की थी। इसमें उन्होंने बताया है कि 89 देशों ने औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा के सिलसिले में वैधानिक प्राविधान (Legislative Provisions) बनाए हैं, इनमें से 60 देश ऐसे हैं जिन्होंने Special Domestic Violence Laws बनाए हैं, इसके अलावा बहुत-से देशों ने घरेलू हिंसा रोकने के लिए National Plan of Action तैयार किए हैं। यह सूरते-हाल सन् 2003 ई॰ के मुक़ाबले में बेहतर है, जब UNIFEM ने Anti-Violence Legislation का

एक Scan तैयार किया था तो उससे पता चला था कि सिर्फ़ 45 देशों ने घरेलू हिंसा के सिलसिले में विशेष क़ानून बनाए हैं।

भारत का क़ानून

हाल ही के वर्षों में घरेलू हिंसा रोकने के लिए भारत में एक क़ानून पारित किया गया है। इसका नाम है : The Protection of Women from Domestic Violence Act 2005। वैसे तो एक दशक पहले से इसपर काम हो रहा था। सन् 1992 ई॰ में भारतीय वकीलों ने घरेलू हिंसा के विषय पर एक शुरुआती ड्राफ़्ट तैयार किया था, फिर सन् 1994 ई॰ में राष्ट्रीय महिला आयोग (National Commission for Women) ने एक बिल तैयार किया। बाद में भारतीय वकीलों ने महिला आन्दोलनों के रहनुमाओं के सुझाव से सन् 1999 ई॰ में एक दूसरा बिल तैयार किया। भारत सरकार ने सन् 2001 ई॰ में पार्लियामेंट में एक बिल पेश किया, जिसका नाम The Protection from Domestic Violence Bill 2001 था। कई बार की बहस, फेर-बदल और पुनरावलोकन के बाद अगस्त सन् 2005 ई॰ में इसे पार्लियामेंट ने पारित किया, सितम्बर सन् 2005 ई॰ में राष्ट्रपति ने इसपर हस्ताक्षर किए और 26 अक्टूबर सन् 2006 ई॰ से अधिनियम (Act) के तौर पर यह लागू हुआ। इस क़ानून की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. इसकी परिधि में हिंसा के सभी रूप (शाब्दिक, शारीरिक, यौनिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक इत्यादि) को शामिल किया गया है। हिंसा की प्रत्येक वह स्थिति जिससे औरत को शारीरिक या मनोवैज्ञानिक क्षति पहुँचे या उसके स्वास्थ्य अथवा जीवन को ख़तरा हो, इसमें शामिल है।
2. इससे लाभ उठाने का अधिकार सिर्फ़ पत्नी ही को नहीं है बल्कि उस औरत को भी होगा जो अविवाहित होने के बावजूद किसी मर्द के साथ रहती हो और उससे उसका यौन-सम्बन्ध हो।
3. न केवल पति या पुरुष साथी (Male Partner) बल्कि उसके निकट के रिश्तेदारों : माँ, बहन वग़ैरा के ख़िलाफ़ भी केस दर्ज किया जा सकता है।
4. सिर्फ़ पीड़ित महिला ही नहीं, बल्कि उसका पड़ोसी, रिश्तेदार या कोई भी समाज सेवी उसकी तरफ़ से केस दर्ज करा सकता है।

5. पीड़ित महिला अपने साथी (Partner) के जिस घर में रहती है, अदालत उसका एक हिस्सा उसके इस्तेमाल के लिए ख़ास कर देगी और मुल्ज़िम को न सिर्फ़ यह कि उस अलॉट किए गए (Alloted) हिस्से में जाने की इजाज़त न होगी, बल्कि पीड़ित महिला से मौखिक, लिखित, फ़ोन या ई-मेल से किसी तरह का सम्पर्क करना उसके लिए निषेध होगा।
6. मजिस्ट्रेट न सिर्फ़ यह कि पीड़ित महिला के गुज़ारे के लिए माहाना एक रक़म तय कर देगा, जिसकी अदायगी मुल्ज़िम के ज़िम्मे होगी, बल्कि हिंसा के नतीजे में पीड़िता को पहुँचनेवाली चोट, चाहे वह शारीरिक हो या मनोवैज्ञानिक उसका हरजाना भी मुल्ज़िम पर लगाएगा।

मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की

उपरोक्त क़ानून के विवरण से अच्छी तरह अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि घरेलू हिंसा की रोक-थाम के लिए इसमें कितनी सख़्ती रखी गई है। लेकिन क्या यह औरत के दर्द की दवा बन सका? इससे प्रॉपर्टी की मालिक उच्च श्रेणी (Upper Class) की कुछ औरतों का तो फ़ायदा उठाना मुमकिन हुआ कि वे अपने पतियों पर झूठे-सच्चे आरोप लगाकर उन्हें परेशान करती रहीं और महिला आन्दोलन के उन अलमबरदारों की बाँछें खिल गईं, जो औरतों के उत्पीड़न का पूरा ज़िम्मेदार मर्द और उसके ख़ानदानवालों को समझते हैं, लेकिन आम औरतों की बड़ी संख्या को इससे कुछ हासिल न हो सका। वे अब भी हिंसा का शिकार हैं।

इस क़ानून को लागू हुए अभी ज़्यादा समय नहीं गुज़रा है, लेकिन इसके ग़लत इस्तेमाल की शिकायतें आम हो रही हैं और इससे मर्दों की एक बड़ी तादाद परेशान है। इसका अन्दाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि पतियों के अधिकारों की हिफ़ाज़त करने और उन्हें घरेलू हिंसा से बचाने के लिए कुछ आन्दोलन (Movements), जिसमें Save Family Foundation और My Nation उल्लेखनीय हैं, सरगर्म हो गए हैं। पतियों के ख़िलाफ़ हिंसा के विषय पर एक सर्वे कराया गया है, जिससे यह बात खुलकर सामने आई है कि 20 प्रतिशत से 32 प्रतिशत पति अपनी पत्नियों की ओर से हर तरह की हिंसा के शिकार हैं।[10]

यही दशा दूसरे देशों की भी है कि वहाँ हिंसा रोकने की हज़ारों कोशिशों के बावजूद उसमें सफलता नहीं मिल रही है। परिस्थिति की गम्भीरता का अन्दाज़ा 13 अक्टूबर, सन् 2009 ई॰ को पेश की गई संयुक्त राष्ट्र की एक वर्तमान रिपोर्ट (Current Report) से अच्छी तरह लगाया जा सकता है–

"Despite efforts by governments and campaigns carried out by international organisations, violence against women continued on a wide scale in both developed and developing countries."[11]

"सरकारों के प्रयासों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के अन्दोलनों के बावजूद औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा, विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के देशों में बड़े पैमाने पर निरन्तर जारी है।"

ग़लत जाँच, ग़लत इलाज

घरेलू हिंसा रोकने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर की जानेवाली कोशिशों, सरकारों के प्रयासों और महिला संगठनों के आन्दोलनों के बावजूद इसमें कमी न आने का कारण यह है कि समस्या की ग़लत जाँच की गई और मर्ज़ का ग़लत तरीक़े से इलाज करने की कोशिश की गई। यह विचार किया गया कि औरतों के उत्पीड़न का कारण उन्हें मर्दों के बराबर और उनके जैसे अधिकार हासिल न होना है। अतः आन्दोलन चलाकर उन्हें भी वे तमाम अधिकार दिलाए गए जिनसे मर्द परिपूर्ण थे। यह ख़याल किया गया कि उनके उत्पीड़न का कारण उनपर अनुचित पाबन्दियाँ और आज़ादी से वंचित होना है। अतः उनके लिए हर तरह की आज़ादी की वकालत की गई और उन्हें यह अधिकार दिलाया गया कि वे अपनी मरज़ी की स्वयं मालिक हैं। कोई, यहाँ तक कि उनके पति भी, उनपर अपनी मरज़ी नहीं थोप सकते। यह विचार किया गया कि उनके उत्पीड़न का कारण आर्थिक दृष्टि से मर्दों पर उनकी निर्भरता है। अतः नौकरियों के दरवाज़े उनके लिए खोल दिए गए और उन्हें आत्मनिर्भर बना दिया गया। हालाँकि ये सारे विचार निराधार और ग़लत अवलोकन पर आधारित थे। अतः सही जाँच और सही इलाज न होने के कारण मर्ज़ में न सिर्फ़ यह कि कोई कमी न हुई, बल्कि उसकी तीव्रता और जोखिम और अधिक बढ़ रहा है।

घरेलू हिंसा रोकने के लिए इस्लाम के उपाय

घरेलू हिंसा की समस्या को इस्लाम ने बड़ी ख़ूबसूरती से हल किया है। उसने पारिवारिक व्यवस्था को जिन लाइनों पर लाने और उसे सही तरीक़े पर चलाने के लिए जो शिक्षाएँ और निर्देश दिए हैं, अगर उनपर पूरी तरह अमल किया जाए तो घर जन्नत की मिसाल बन जाता है और एक परिवार में रहनेवाले सारे लोग हँसी-ख़ुशी ज़िन्दगी बसर करते हैं। न किसी को अपने अधिकार के मारे जाने का एहसास होता है, न किसी को दूसरे पर अत्याचार करने का मौक़ा मिलता है। नीचे की बातों में इस्लाम की उन शिक्षाओं और मूल्यों का उल्लेख किया जा रहा है, जो घरेलू हिंसा को रोकने में सहायक बनती हैं।

1. मर्द और औरत एक-दूसरे के मददगार हैं, न कि मुख़ालिफ़

इस्लाम ने मर्दों और औरतों को एक-दूसरे का दुश्मन और प्रतिद्वन्द्वी नहीं, बल्कि दोस्त और हमदर्द बनाया है, जो एक-दूसरे के अधिकारों का लिहाज़ करते और आपस में मिल-जुलकर अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करते हैं। अल्लाह फ़रमाता है—

"मोमिन मर्द और मोमिन औरतें, ये सब एक-दूसरे के साथी हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-71)

उसने पारिवारिक व्यवस्था में पति-पत्नी को एक-दूसरे के लिए सुकून का ज़रिआ ठहराया है और आपस में मुहब्बत और रहम व मेहरबानी से काम लेने की ताकीद की है। अल्लाह का फ़रमान है—

"और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही सहजाति से तुम्हारे लिए जोड़े पैदा किए, ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो, और तुम्हारे बीच मुहब्बत और रहमत पैदा कर दी।" (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-21)

2. अधिकारों में समानता और स्वाभाविक कार्य-विभाजन

इस्लाम ने मर्दों और औरतों के बीच सारे मामलों में समानता अपनाई है और उनके बीच किसी तरह का अन्तर नहीं किया है। उसने औरतों को मर्दों की तरह सारे सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार दिए हैं। वे शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार रखती हैं, चुनाँचे उसे किसी मैदान में भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने से नहीं रोका जा सकता। उसे पति चुनने का अधिकार प्राप्त है, अतः उसकी अनुमति लिए बिना किसी से उसका विवाह (निकाह) नहीं किया जा सकता। वह अपने अप्रिय पति से छुटकारा पाने का हक़ रखती है, अतः कोई उसे उसके अप्रिय पति के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर नहीं कर सकता। उसे समाज में मर्दों की तरह, बल्कि कुछ हैसियतों में मर्दों से बढ़कर, मान-सम्मान का स्थान प्राप्त है। अतः कोई उसकी इज़्ज़त व आबरू से खिलवाड़ नहीं कर सकता और अगर ऐसा करेगा तो उसकी दर्दनाक सज़ा पाएगा। उसे महर* और नफ़्क़ा* और माल व जायदाद के स्वामित्व का अधिकार प्राप्त है। अतः जो चीज़ भी उसके स्वामित्व में हो, कोई भी, यहाँ तक कि उसका पति भी, उससे ज़बरदस्ती नहीं ले सकता है। उसे माल व दौलत हासिल करने के लिए कोशिश करने का हक़ हासिल है। अतः वह अपने शौक़ और मिज़ाज के मुताबिक़ कोई भी काम कर सकती है और कोई भी पेशा अपना सकती है। मतलब यह कि इस्लाम ने औरत को अधिकार दिए हैं, पश्चिमी समाज में वे अधिकार औरतों को सदियों बाद और लम्बे संघर्ष और कोशिश के नतीजे में हासिल हुए हैं।

लेकिन इस्लाम की नज़र में मर्द और औरत के अधिकारों में समानता का मतलब दोनों के कामों की एकरूपता नहीं है। उसने दोनों के बीच कामों का न्यायपरक विभाजन किया है और दोनों के कार्यक्षेत्र अलग-अलग रखे हैं। इस सिलसिले में उसने दोनों की स्वाभाविक योग्यताओं का पूरा ध्यान रखा है। औरत के ज़िम्मे क़ुदरत ने बच्चों की पैदाइश और परवरिश का

---

* महर : निकाह के वक़्त पति द्वारा पत्नी को दी जानेवाली रक़म।

* नफ़्क़ा : पति द्वारा आजीवन पत्नी का भरण-पोषण का ख़र्च। (प्रकाशक)

बहुत ही ऊँचा काम सौंपा है। वह माहवारी, प्रसव और गर्भ व स्तनपान के चरणों से गुज़रती है, इसी लिए इस्लाम ने औरत को घर के अन्दर के कामों की ज़िम्मेदारी दी है और उसकी इन महत्वपूर्ण व्यस्तताओं को देखते हुए उसे आर्थिक संसाधन जुटाने की ज़िम्मेदारी से मुक्त रखा है। मर्द के ज़िम्मे इस्लाम ने घर से बाहर के काम रखे हैं और उसे पाबन्द किया है कि वह औरत की आर्थिक ज़िम्मेदारी ले और उसे सुरक्षा प्रदान करे।

पारिवारिक व्यवस्था के सही ढंग से चलने के लिए कामों का विभाजन ज़रूरी था। अगर हर व्यक्ति हर काम करने लगे तो कोई भी व्यवस्था सही तरीक़े से नहीं चल सकती। बच्चों की पैदाइश और परवरिश का काम सिर्फ़ औरत ही अन्जाम देती है। उसके साथ यह बड़ा अत्याचार होता अगर ये काम भी उससे जुड़े रहते, और फिर घर से बाहर के कामों का भी उसे पाबन्द बना दिया जाता।[12]

इस्लाम ने मर्द और औरत दोनों को अलग-अलग क्षेत्र में जो काम सौंपे हैं उनका उन्हें ज़िम्मेदार बनाया है और ख़बरदार किया है कि उनसे उनपर डाले गए कामों के बारे में मरने के बाद आनेवाली ज़िन्दगी में पूछ-ताछ की जाएगी कि उन्हें उन्होंने सही तौर पर अन्जाम दिया या उनकी अदायगी में कोताही की। हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰)* से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰)* ने इरशाद फ़रमाया—

> "ख़बरदार तुममें से हर व्यक्ति निगराँ (रखवाली करनेवाला) है। और उससे उसकी रैयत (अधीन लोगों) के बारे में पूछा जाएगा। मर्द अपने घरवालों का निगराँ है और उससे उसके अधीन लोगों के बारे में पूछा जाएगा। औरत अपने पति के घरवालों और बच्चों की निगराँ है और उससे उनके बारे में पूछा जाएगा।"
>
> (हदीस : बुख़ारी-7137 व मुस्लिम-1827)

---

* (रज़ि॰) : रज़ियल्लाहु अनहु— अल्लाह उनसे राज़ी हो।

* (सल्ल॰) : सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम— उनपर अल्लाह की रहमत व सलामती हो।

(प्रकाशक)

3. मर्द की ज़िम्मेदारी परिवार की हिफ़ाज़त और निगरानी

मर्द और औरत दोनों के कार्य-क्षेत्र की व्याख्या और ज़िम्मेदारियों के तय करने के साथ इस्लाम ने मर्द पर एक अतिरिक्त ज़िम्मेदारी डाली है और वह है परिवार का मुखिया होना। किसी भी संस्था (Institution) के सुनियोजित ढंग से चलते रहने के लिए ज़रूरी है कि उसका एक प्रबन्धक हो, जो उसके सारे कामों की निगरानी करे। उसकी व्यवस्था और कन्ट्रोल को ठीक-ठाक रखे, उससे सम्बन्धित तमाम लोगों की गतिविधियों पर नज़र रखे। इसी तरह यह भी ज़रूरी है कि उसके अधीन लोगों और उसके बीच आपस में मुहब्बत और हमदर्दी का सम्बन्ध बना रहे। वह उनके अधिकार पहचाने और उनकी हिफ़ाज़त करे और वे लोग भी पूरी खुशदिली के साथ उसके आदेशों का पालन करें और उसकी नाफ़रमानी न करें। यह ज़िम्मेदारी किसी एक व्यक्ति को ही दी जा सकती है। अगर एक समान अधिकार व इख़्तियार के साथ एक से ज़्यादा व्यक्तियों को किसी संस्था (संगठन) का संचालन सौंप दिया जाए और हर एक अपनी आज़ाद मरज़ी से उस संस्था को चलाना चाहे तो उसकी व्यवस्था का छिन्न-भिन्न हो जाना निश्चित है। मर्द और औरत पारिवारिक व्यवस्था के दो आधारभूत स्तम्भ हैं। उसके प्रबन्ध का उत्तरदायित्व उनमें से किसी एक ही को दिया जा सकता था। इस्लाम ने यह ज़िम्मेदारी मर्द के सुपुर्द की, क़ुरआन में इसी को 'दर्जा' कहा गया है।

अल्लाह का फ़रमान है—

"औरतों के लिए भी अच्छे तरीक़े पर वैसे ही अधिकार हैं जैसे मर्दों के अधिकार उनपर हैं। लेकिन हाँ, मर्दों को उनपर एक 'दर्जा' हासिल है।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-228)

इसी ज़िम्मेदारी की बुनियाद पर मर्द को क़ुरआन में 'क़व्वाम' या सरबराह कहा गया है—

"मर्द औरतों के 'क़व्वाम' (सरबराह) हैं, इसलिए कि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे पर फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) दी है और इसलिए कि मर्द अपना माल ख़र्च करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

क़ुरआन के कुछ अनुवादकों ने अपनी भाषा में अनुवाद करने के बजाय शब्द 'क़व्वाम' को ज्यों-का-त्यों बाक़ी रखा है। कुछ ने इसका अनुवाद हाकिम, अफ़सर, सरपरस्त और सिरधरा वग़ैरा शब्दों से किया है। इससे इसका पूरा भावार्थ स्पष्ट नहीं हो पाता। शब्द 'क़व्वाम' का सही भावार्थ स्पष्ट न होने के कारण इस्लाम की यह शिक्षा आपत्ति और आलोचनाओं का निशाना बनी है। कहा गया है कि इस्लाम में मर्दों को औरतों पर हाकिमाना इख़्तियार (शासनात्मक अधिकार) दे दिया गया है और औरतों को उनके हाथ में कठपुतली बना दिया गया है कि वे जिस तरह चाहें उन्हें नचाते रहें और अपनी मरज़ी का ग़ुलाम बनाए रखें। इसलिए मुनासिब मालूम होता है कि यहाँ इस शब्द के सही मतलब को स्पष्ट कर दिया जाए और आयत* के सही भावार्थ पर कुछ रौशनी डाल दी जाए।

शब्द 'क़व्वाम' का मतलब

शब्द 'क़व्वाम' अरबी भाषा के शब्द 'क़ा-म' से बना है जिसका एक अर्थ निगरानी व ख़बरगीरी है। जब अरबी वाक्य—'क़ा-म अलल-अम्र' बोला जाता है तो इसका अर्थ होता है 'किसी काम में व्यस्त होना, किसी काम को सम्भालना' इसी प्रकार वाक्य—'क़ाम अला अहलिही' जब बोला जाता है तो इसका अर्थ होता है 'बाल-बच्चों की देखभाल करना, भरण-पोषण करना, ख़र्च उठाना'।[13]

मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह॰) ने लिखा है—

"'क़व्वाम' या 'क़य्यिम' उस शख़्स को कहते हैं जो किसी व्यक्ति या संस्था या व्यवस्था के मामलों को ठीक हालत में चलाने और उसकी हिफ़ाज़त व निगरानी करने और उसकी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए ज़िम्मेदार हो।"[14]

मौलाना अमीन अहसन इस्लाही (रह॰) फ़रमाते हैं—

"अरबी में 'क़ाम' के बाद शब्द 'अला' आता है तो उसके अन्दर निगरानी, हिफ़ाज़त, भरण-पोषण और देखभाल का अर्थ पैदा हो

* क़ुरआनी मंत्र (वाक्य) को आयत कहते हैं। (प्रकाशक)

जाता है। क़ुरआन के इस वाक्य 'क़व्वामू-न अलन्निसा' में उच्चता का भाव भी है और भरण-पोषण व देखभाल का भी, और ये दोनों बातें एक-दूसरे की पूरक हैं।[15]

मौलाना अब्दुल-माजिद दरयाबादी (रह॰) ने लिखा है—

'क़व्वाम' का अर्थ है—किसी चीज़ का रक्षक, प्रबन्धक, मार्गदर्शक। यहाँ अभिप्राय है कि मर्द औरतों के मामलों का प्रबन्ध करनेवाला, उनका भरण-पोषण करनेवाला, उनपर आदेश लागू करनेवाला है।"[16]

भाषा विशेषज्ञों के कथनों से भी इसका समर्थन होता है। अल्लामा फ़िरोज़ाबादी फ़रमाते हैं—

"इसका अर्थ है, मर्द द्वारा औरत का भरण-पोषण और उसकी देखभाल करना।"[17]

इसकी व्याख्या में अल्लामा ज़ुबैदी (रह॰) ने लिखा है—

"मर्द द्वारा औरत का भरण-पोषण करते हुए उसकी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले को 'क़व्वाम' कहा जाता है।"[18]

लिसानुल-अरब में है—

"कभी-कभी 'क़याम' सुरक्षा व सुधार करने के अर्थ में आता है। अल्लाह के इस फ़रमान "अर्रिजालु क़व्वामू-न अलन्निसा" अर्थात मर्द औरत पर क़व्वाम है में यही मुराद है।"[19]

आगे है—

मर्द ने औरत का भरण-पोषण और देखभाल की। ऐसा करनेवाले को 'क़व्वाम' कहा जाता है। अल्लाह तआला का फ़रमान है—

"अर्रिजालु क़व्वामू-न-अलन्निसा।" यानी "मर्द औरतों के कामों के ज़िम्मेदार हैं, उनके मामलों में दिलचस्पी लेनेवाले हैं।"[20]

'क़व्वाम' शब्द अतिशयोक्ति का रूप है। इसमें किसी काम को बेहतर-से-बेहतर तरीक़े से पूरा करने और ख़ूब अच्छी तरह उसकी निगरानी व हिफ़ाज़त करने का अर्थ पाया जाता है। अबू-हय्यान ने लिखा है—

"शब्द 'क़व्वाम' अतिशयोक्ति का रूप है। इसके लिए 'क़य्याम' और 'क़य्यिम' के लफ़्ज़ भी इस्तेमाल में आते हैं। इसका अर्थ है, वह आदमी जो किसी काम को अन्जाम दे और उसकी हिफ़ाज़त करे।"[21]

अल्लामा क़ुरतुबी फ़रमाते हैं–

"क़व्वाम' में अतिशयोक्ति का भावार्थ पाया जाता है। इसका अर्थ है किसी काम को पूरा करना, उसमें अच्छी तरह ग़ौर व फ़िक्र करना और ख़ूब मेहनत से उसकी हिफ़ाज़त करना।"[22]

अल्लामा बग़वी लिखते हैं–

"क़व्वाम और 'क़य्यिम' दोनों का एक ही अर्थ है, किन्तु 'क़व्वाम' में ज़्यादा अतिशयोक्ति पाई जाती है। इसका अर्थ है, वह आदमी जो फ़ायदा पहुँचानेवाले काम करे, व्यवस्थाएँ करे और अदब भी सिखाए।"[23]

क़ुरआन के टीकाकारों की व्याख्याएँ

क़ुरआन के टीकाकारों ने भी इस आयत की व्याख्या में लिखा है कि मर्दों के औरतों पर 'क़व्वाम' होने का मतलब यह है कि वे औरतों की तालीम और तरबियत पर ध्यान देते हैं, उनके मामलों की निगरानी करते हैं। अल्लाह और पतियों के जो हक़ औरतों पर अनिवार्य हैं उनकी अदायगी की ताकीद करते हैं, और अगर इस मामले में औरतों से कोई कोताही होती है तो उनकी पकड़ करते हैं। उन्हें अच्छे कामों का हुक्म देते हैं और बुरे कामों से रोकते हैं। और जिस तरह कोई राजा अपनी प्रजा की देखभाल करता है, उसी तरह वे औरतों की देखभाल करते और उनके अधिकारों और हितों की हिफ़ाज़त करते हैं। कुछ व्याख्याएँ पेश हैं–

अबू-जाफ़र तबरी (मृ॰ 310 हि॰) कहते हैं–

"वे अपनी औरतों को अदब सिखाने का काम करते हैं और अल्लाह ने उनपर अपने और उनके पतियों के जो हक़ तय किए हैं, उनकी अदायगी में कोताही पर उनकी पकड़ करते हैं।"[24]

ऐसी ही टीका मावरदी (मृ॰ 450 हि॰), बग़वी (मृ॰ 510 हि॰), ख़ाज़िन

(मृ॰ 741 हि॰), सुयूती (मृ॰ 911 हि॰) ने भी की है।[25]

ज़मख़्शरी (मृ॰ 538 हि॰) ने लिखा है–

"वे उन्हें (अच्छे कामों का) हुक्म देते और (बुरे कामों से) रोकते हैं। और उनके साथ इस तरह मामला करते हैं, जिस तरह शासक अपनी प्रजा के साथ करता है।"[26]

इससे मिलती-जुलती व्याख्या बैज़ावी (मृ॰ 685 हि॰), नसफ़ी (मृ॰ 701 हि॰) बक़ाई (मृ॰ 885 हि॰) अबुल-सऊद (मृ॰ 982 हि॰) और आलूसी (मृ॰ 1270 हि॰) ने भी की है।[27]

इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी (मृ॰ 606 हि॰) लिखते हैं–

"क़व्वाम' उस व्यक्ति को कहा जाता है जो किसी मामले को ख़ूब अच्छी तरह अंन्जाम दे। औरत का 'क़य्यिम' या 'क़व्वाम' उस आदमी को कहा जाता है जो उसके काम अंजाम दे और उसकी हिफ़ाज़त का बन्दोबस्त करे।"[28]

और आगे लिखते हैं–

"यानी उन्हें औरतों को अदब सिखाने और कोताही की दशा में उनकी पकड़ करने की ज़िम्मेदारी दी गई है। मानो अल्लाह ने मर्द को औरत पर हुक्म चलानेवाला बनाया है और उसपर (यानी औरत पर) उसका (यानी मर्द का) हुक्म चलता है।"[29]

अल्लामा इब्ने-कसीर (रह॰) (मृ॰ 774 हि॰) ने लिखा है–

"औरत पर मर्द के 'क़य्यिम' होने का मतलब यह है कि वह उसका सरदार, उसका बड़ा, उसपर हुक्म चलानेवाला और उसके टेढ़ेपन की सूरत में उसे तमीज़ सिखानेवाला है।"[30]

मर्द को क़व्वाम बनाए जाने की वजहें

उपरोक्त आयतों में मर्दों को औरतों पर 'क़व्वाम' बनाए जाने के ज़िक्र के साथ वे वजहें भी बता दी गई हैं, जिनके आधार पर उन्हें यह ज़िम्मेदारी सौंपी गई है। इस सिलसिले में दो कारण उल्लिखित हैं। टीकाकारों के कथनानुसार पहला कारण ईश्वर-प्रदत्त (नैसर्गिक) है और दूसरा उद्यमी (कोशिश से हासिल होनेवाला)।[31]

(क) ईश्वर-प्रदत्त (नैसर्गिक) श्रेष्ठता

पहले कारण के बारे में क़ुरआन ने संक्षिप्त रूप में बयान किया है कि अल्लाह तआला ने कुछ पहलुओं से मर्दों को औरतों पर बड़ाई दी है।

> "इस कारण से कि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे पर श्रेष्ठता दी है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

आयत के इस टुकड़े में, यद्यपि खुलकर नहीं बताया गया है कि किसको किसपर श्रेष्ठता प्राप्त है, लेकिन सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि यहाँ पर मक़सद मर्दों की औरतों पर श्रेष्ठता का बयान करना है। फिर श्रेष्ठता भी एक लिंग की दूसरे लिंग पर है। अन्यथा वैयक्तिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो महिला वर्ग में भी बहुत-सी औरतें ऐसी हो सकती हैं जिन्हें बहुत-से मर्दों पर श्रेष्ठता प्राप्त हो।[32]

इसके अलावा यह कि यहाँ सिर्फ़ उस श्रेष्ठता के बारे में बहस की गई है जिससे मर्दों के लिए 'क़व्वामियत' का अधिकार सिद्ध होता है। मौलाना अमीन अहसन इस्लाही (रह॰) ने लिखा है—

> "मर्द को बहुत-सी ख़ूबियों में औरतों पर स्पष्ट श्रेष्ठता प्राप्त है, जिसके आधार पर उसी को शोभा देता है कि 'क़व्वामियत' की ज़िम्मेदारी उसी पर डाली जाए। जैसे रक्षा-सुरक्षा की जो ताक़त व सामर्थ्य या कमाने और हाथ-पाँव मारने की जो योग्यता और हिम्मत उसके अन्दर है, वह औरत के अन्दर नहीं है। यह बात यहाँ ध्यान में रहे कि जिस श्रेष्ठता की बात की जा रही है वह परिपूर्ण श्रेष्ठता नहीं है, बल्कि सिर्फ़ उस श्रेठता की है जो मर्द की 'क़व्वामियत' को साबित करती है। कुछ दूसरे पहलू औरत की श्रेष्ठता के भी हैं, लेकिन उनका 'क़व्वामियत' से ताल्लुक़ नहीं है। जैसे, औरत घर-बार संभालने और बच्चों की परवरिश व देखभाल की जो क़ाबिलियत रखती है वह मर्द नहीं रखता है। इसी वजह से क़ुरआन ने यहाँ बात साफ़ तौर पर नहीं की है, जिससे मर्द और औरत दोनों के किसी-न-किसी पहलू से श्रेष्ठ होने की बात निकलती है, लेकिन

'क़व्वामियत' के पहलू से मर्द ही की योग्यता का पहलू स्पष्ट होता है।"[33]

यहाँ श्रेष्ठता से क्या मुराद है? इसे स्पष्ट करते हुए मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह॰) ने लिखा है—

"यहाँ श्रेष्ठता का अर्थ बड़ाई, करामत और इज़्ज़त नहीं है, जैसा कि एक आम आदमी इस लफ़्ज़ का मतलब ले लेगा, बल्कि यहाँ यह लफ़्ज़ इस मानी में है कि उनमें से एक सिन्फ़ (यानी मर्द) को अल्लाह ने क़ुदरती तौर पर कुछ ऐसी ख़ासियतें और ताक़तें दी हैं जो दूसरी सिन्फ़ (यानी औरत) को नहीं दीं या उससे कम दी हैं। इस बिना पर ख़ानदानी व्यवस्था में मर्द ही 'क़व्वाम' होने की योग्यता रखता है और औरत स्वभाव से ही ऐसी बनाई गई है कि उसे ख़ानदानी ज़िन्दगी में मर्द की देखभाल व हिफ़ाज़त के तहत रहना चाहिए।"[34]

क़ुरआन के टीकाकारों ने औरतों पर मर्दों की श्रेष्ठता के बहुत-से कारण बताए हैं। मिसाल के तौर पर इब्ने-कसीर (रह॰) ने नुबुव्वत, हुक्मरानी और अदालत का ज़िक्र किया है।[35]

ज़स्सास, मावरदी, इब्नुल-अरबी, बक़ाई, सुयूती वग़ैरा ने सिर्फ़ अक़्ल व राय या इसके साथ शारीरिक क्षमता, धर्म में परिपूर्णता (कमाल) और वली होने का ज़िक्र किया है।[36]

कुछ टीकाकारों ने उस हदीस को भी उद्धृत किया है जिसमें औरतों को 'बुद्धि और धर्म में अपूर्ण' कहा गया है।[37]

इमाम राज़ी कहते हैं—

"औरतों पर मर्दों को बहुत-से कारणों से श्रेष्ठता प्राप्त है। इनमें से कुछ प्राकृतिक गुण हैं और कुछ धार्मिक आदेश। जहाँ तक प्राकृतिक गुणों का सम्बन्ध है तो उनकी बुनियाद दो चीज़ों पर है: ज्ञान और योग्यता। इसमें शक नहीं कि मर्दों की अक़्ल और उनका ज्ञान औरतों की अपेक्षा अधिक होता है और इसमें भी संदेह नहीं

कि कठिनाई से भरे कामों को भी कर पाने की उनमें भरपूर शक्ति होती है। इसके अतिरिक्त बुद्धि, दूरदर्शिता, ताक़त, लेखन, घुड़सवारी, तीर-अन्दाज़ी के मामले में भी पुरुष औरत से बढ़कर होते हैं, और यह भी कि उनमें नबी और विद्वान (उलमा) हुए हैं, वे नेतृत्व के बड़े पदों पर भी और छोटे पदों पर भी नियुक्त होते हैं। जिहाद, अज़ान, ख़ुतबा*, एतिकाफ़* और धर्मानुसार दण्ड और क़िसास में गवाही के मामले में आम सहमती से और इमाम शाफ़ई (रह॰) के नज़दीक निकाह के मामले में भी उन्हें श्रेष्ठता प्राप्त है। मीरास (पैतृक) सम्पत्ति में उनका हिस्सा ज़्यादा होता है और वे दोगुना हिस्सा पाने के हक़दार होते हैं। जाने-अनजाने क़त्ल के अपराध में 'दियत' (अर्थ-दण्ड) अदा करते हैं। बँटवारे में हिस्सा लेते हैं। निकाह में उन्हें वली बनने का हक़ है। तलाक़, रजअत* और कई पत्नियाँ रखने का भी उन्हें अधिकार है। औलाद को उन्हीं से सम्बद्ध किया जाता है। ये सभी चीज़ें औरतों पर मर्दों की श्रेष्ठता को सिद्ध करती हैं।''[38]

बहुत-से टीकाकारों ने ऊपर बताए गए श्रेष्ठता के कारणों के अलावा भी बहुत-से कारणों का ज़िक्र किया है, जैसे जुमा और जमाअत में शामिल होना, व्यापार, जंगों में हिस्सा लेना, लौंडियों से फ़ायदा उठाना। बल्कि उन्होंने कुछ ऐसी भी चीज़ों का ज़िक्र किया है जिनकी किसी तरह भी श्रेष्ठता के कारणों में गिनती नहीं की जा सकती। जैसे चेहरा खुला रहना, अमामा बाँधना, दाढ़ी होना।[39]

अल्लामा क़ुरतबी ने इसपर आलोचना की है कि बहुत-से लोगों ने दाढ़ी को भी श्रेष्ठता के कारणों में गिना है, हालाँकि यह बात सही नहीं है।[40]

शैख़ मुहम्मद अब्दुहु और उनके शागिर्द अल्लामा रशीद रज़ा ने इस बारे

---

* ख़ुतबा : एक ख़ास भाषण को कहते हैं जो ख़ास अवसरों पर जैसे, जुमा की नमाज़ में दिया जाता है।

* एतिकाफ़ : रमज़ान के आख़िरी दस दिनों में इबादत के लिए मस्जिद में रहना।

* रजअत : तलाक़ के बाद फिर से औरत को अपने पत्नित्व में रख लेना। (प्रकाशक)

में बहुत अच्छी बहस की है। यहाँ उसका ख़ुलासा पेश कर देना मुनासिब लगता है। शैख़ मुहम्मद अब्दुहु (रह॰) कहते हैं—

"अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि उसने कुछ लोगों को कुछ लोगों पर श्रेष्ठता प्रदान की। इसके बजाय अगर वह यह कहता कि उसने मर्दों को औरतों पर फ़ज़ीलत दी है तो बात थोड़ी भी होती और ज़्यादा स्पष्ट भी लेकिन इसके बजाय उसने यह तरीक़ा अपनाया। इसकी हिकमत यह है कि अल्लाह तआला यह बताना चाहता है कि मर्द और औरत का आपसी सम्बन्ध वैसा ही है जैसा एक आदमी के बदन के अलग-अलग अंगों का आपस में होता है। मर्द सिर की तरह है और औरत शरीर की तरह। फ़ज़ीलत के जो कारण क़ुरआन ने बयान किए हैं उनमें से एक प्राकृतिक है और दूसरा उद्यमी। प्राकृतिक कारण यह है कि मर्द का मिज़ाज ज़्यादा मज़बूत और पूर्ण होता है। साथ ही, उसकी अक़्ल ज़्यादा परिपक्व होती है और वह मामलों के सारे पहलुओं पर ठीक तरह से ग़ौर व फ़िक्र कर सकता है। इसके अलावा यह भी कि किसी भी काम में उसे कमाल हासिल होता है। मर्दों को कमाने, आविष्कार करने, खोज-बीन करने और मामलों में हस्तक्षेप करने की ज़्यादा सामर्थ्य प्राप्त होती है। इसी कारण से उनपर यह ज़िम्मेदारी डाली गई है कि वे औरतों पर ख़र्च करें, उन्हें सुरक्षा प्रदान करें और पारिवारिक समाज का सामान्य नेतृत्व करें। इसलिए ज़रूरी है कि हर समाज का एक नेतृत्व करनेवाला (सरबराह) हो, जिससे आम मामलों के सिलसिले में रुजूअ किया जाए।"[41]

इसी संदर्भ में अल्लामा रशीद रज़ा (रह॰) ने कुछ बिन्दुओं की व्याख्या की है। लिखते हैं—

"मर्दों की जानी-मानी ज़िम्मेदारी यह है कि वे औरतों को हिफ़ाज़त दें, उनकी देखभाल और सरपरस्ती करें और उनकी ज़रूरतें पूरी करें। इसी कारण से जिहाद औरतों के बजाय मर्दों पर फ़र्ज़ किया गया है। इसलिए कि इससे औरतों की भी हिफ़ाज़त होती है और

इसी लिए पैतृक सम्पत्ति (मीरास) में मर्दों का हिस्सा औरतों से ज़्यादा रखा गया है, इसलिए कि उनपर ख़र्च करने की जो ज़िम्मेदारी है वह औरतों पर नहीं है। इसका कारण यह है कि अल्लाह ने संरचना में मर्दों को औरतों पर श्रेष्ठता दी है और उनको जितनी शक्ति और सामर्थ्य दी है वह औरतों को नहीं दी है। इस आधार पर, प्रकृति और योग्यता में फ़र्क़ का असर ज़िम्मेदारियों और आदेशों के फ़र्क़ में ज़ाहिर हुआ है। मर्दों की फ़ज़ीलत का दूसरा कारण उद्यमी है जो प्राकृतिक कारण को मज़बूती दे रहा है और वह यह कि मर्द औरतों पर अपना माल ख़र्च करते हैं।''

आगे फ़रमाते हैं—

''मर्दों की औरतों पर श्रेष्ठता का उल्लेख खोलकर करने के बजाय इस तरह बयान किया गया है कि अल्लाह ने कुछ पर कुछ को बड़ाई दी है। इससे यह इशारा करना अभीष्ट है कि मर्द और औरत दोनों एक शरीर के विभिन्न अंगों की तरह हैं, इसलिए न मर्द के लिए मुनासिब है कि वह अपनी ताक़त के नशे में औरत पर ज़ुल्म करे, और न औरत को शोभा देता है कि उसकी श्रेष्ठता को अपने लिए बोझ समझे और न इस चीज़ को अपना निरादर (बेइज़्ज़ती) माने, इसलिए कि जिस तरह किसी आदमी के लिए यह शर्म की बात नहीं कि उसका सिर हाथ से या दिल पेट से श्रेष्ठ हो, क्योंकि बहुत-से अंगों का दूसरे अंगों से श्रेष्ठ होना पूरे शरीर के लिए लाभदायक होता है, फिर इससे किसी अंग को कोई नुक़सान नहीं पहुँचता। इसी तरह कमाने और सुरक्षा देने की सामर्थ्य और ताक़त रखने के मामले में औरत पर मर्द की श्रेष्ठता में हिकमत पाई जाती है, क्योंकि इस तरह औरत आसानी के साथ अपनी स्वाभाविक ज़िम्मेदारी, उदाहरणतः गर्भ-धारण, प्रजनन और बच्चों की शिक्षा-दीक्षा आदि पूरा करती है। वह अपने घर में निर्भय रहती है और आजीविका के संसाधन जुटाने की चिन्ता से मुक्त भी रहती है। श्रेष्ठता के बारे में बात साफ़ तौर पर न कहने में एक दूसरी हिकमत

भी पाई जाती है, वह यह है कि इससे मक़सद यह इशारा करना है कि यह श्रेष्ठता एक जाति की दूसरी जाति पर है। पुरुष जाति के तमाम लोगों की स्त्री जाति के तमाम लोगों पर नहीं है। इसलिए कि बहुत-सी औरतें ऐसी हो सकती हैं जो ज्ञान, कर्म, शारीरिक शक्ति और कमाने की क्षमता में अपने मर्दों से श्रेष्ठ हों। इससे स्पष्ट हुआ कि आयत के इस टुकड़े में हैरत की हद तक संक्षिप्तता पाई जाती है।"[42]

आगे अल्लामा रशीद रज़ा (रह॰) ने क़ुरआन के टीकाकारों की बयान की हुई श्रेष्ठता के कारणों पर टिप्पणी करते हुए लिखा है—

"ज़्यादातर मशहूर टीकाकारों ने श्रेष्ठता (औरतों पर मर्दों की बड़ाई) के कारणों में, नुबुव्वत, बड़ी सरदारी, छोटी सरदारी, अज़ान, इक़ामत* व जुमे के ख़ुतबे (Lectures) वग़ैरा का ज़िक्र किया है। इसमें शक नहीं कि मर्दों को प्राप्त ये श्रेष्ठताएँ उनकी योग्यता पर आधारित हैं, लेकिन ये वे कारण नहीं हैं जिनके आधार पर मर्दों को औरतों के मामलों की सरबराही पर नियुक्त किया गया है। इसलिए कि नुबुव्वत एक विशिष्टता है जिसपर इस तरह का हुक्म आधारित नहीं हो सकता और न हर मर्द के हर औरत से श्रेष्ठ होने की यह दलील दी जा सकती है कि सारे नबी मर्द थे। यही हाल इमामत* और ख़िताबत और दूसरी चीज़ों का है, जिनका सिर्फ़ मर्दों के लिए शरीअत के मुताबिक़ होना क़ुरआन के टीकाकारों ने ज़िक्र किया है। अगर शरीअत ने औरतों को जुमा व हज में ख़ुतबा (Lecture) देने, अज़ान देने और नमाज़ की इमामत करने की इजाज़त दी होती तो भी यह बात इस चीज़ में रोक न बनती कि मर्द प्रकृति के तक़ाज़े के मुताबिक़ औरतों के 'क़व्वाम' हों। लेकिन क़ुरआन के अधिकतर टीकाकार दीने-फ़ितरत (स्वाभाविक धर्म) के आदेशों की वजह को बयान करने में फ़ितरत के क़ानूनों की तरफ़ नहीं फिरते और दूसरे पहलू तलाश करने लगते हैं।[43]

* इक़ामत— समूह में नमाज़ पढ़ने से पहले पढ़ी जानेवाली दूसरी अज़ान।
* इमामत— इमाम (नमाज़ पढ़ानेवाले) का नमाज़ पढ़ाना। (प्रकाशक)

(ख) अनैसर्गिक श्रेष्ठता

औरतों पर मर्दों की श्रेष्ठता का दूसरा कारण क़ुरआन ने यह बयान किया है—

"और इस वजह से कि मर्द अपना माल ख़र्च करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

शरीअत ने परिवार के लोगों का पालन-पोषण करने, उनकी ज़िन्दगी की ज़रूरतें पूरी करने और उनके लिए आर्थिक संसाधन जुटाने की ज़िम्मेदारी मर्द पर डाली है और औरत को इससे बिलकुल आज़ाद रखा है, यह चीज़ भी मर्द को परिवार के मुखिया और प्रबन्धक के पद पर बिठाती है। शैख़ रशीद रज़ा (रह॰) ने इस पहलू पर रौशनी डालते हुए लिखा है—

"औरतें विवाह-बन्धन के द्वारा मर्दों के प्रबन्धन और नेतृत्व में प्रवेश करती हैं और उनकी अधीनता स्वीकार करती हैं। 'महर' के रूप में उन्हें इसका सिला और बदला दिया जाता है। इस तरह मानो कि शरीअत ने औरत को एक मान दिया है कि उसे एक ऐसे मामले में आर्थिक बदले का अधिकारी क़रार दिया जिसकी फ़ितरत और आर्थिक व्यवस्था दोनों माँग करती हैं और वह यह कि उसका पति उसका प्रबन्धक (सरबराह) हो। इस मामले को जन-मान्यता की हैसियत हासिल हो चुकी है, जिसे लोग आपस में ख़ुशदिली के साथ अपनाते हैं मानो कि औरत ने अपनी मरज़ी से पूर्ण समानता से नीचे उतरकर अपनी हैसियत इख़्तियार कर ली और मर्द को अपने ऊपर एक दर्जा ऊँचा (प्रबन्धक का दर्जा) देने पर तैयार हो गई और उसका बदला आर्थिक रूप में क़बूल कर लिया।"

क़ुरआन में अल्लाह का फ़रमान है—

"और उनकी बीवियों के भी, सामान्य नियम के अनुसार, वैसे ही अधिकार हैं, जैसी उनपर ज़िम्मेदारियाँ डाली गई हैं। और पतियों को उनपर एक दर्जा हासिल है।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-228)

इस आयत से मर्दों को वह दर्जा मिल गया जिसकी फ़ितरत माँग करती है।[44]

फ़ुक़हा (इस्लाम धर्म के विद्वानों) ने आयत के इस टुकड़े से यह दलील ली कि औरत के सभी ख़र्चों और ज़रूरतों को पूरा करना मर्द की ज़िम्मेदारी है।[45]

यह विषय क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों और हदीसों में भी उल्लिखित है। अल्लाह का इरशाद है—

"बच्चों के बाप को चलन के मुताबिक़ उन्हें खाना-कपड़ा देना होगा।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-233)

"ख़ुशहाल आदमी अपनी ख़ुशहाली के मुताबिक़ ख़र्च उठाए और जिसको आजीविका (आय-संसाधन) कम दी गई हो वह उसी माल के मुताबिक़ ख़र्च करे जो अल्लाह ने उसे दिया है। इससे ज़्यादा का वह उसे ज़िम्मेदार नहीं ठहराता। दूर नहीं कि अल्लाह तंगदस्ती (बुरे दिनों) के बाद फ़राख़दस्ती (अच्छे दिन) भी अता कर दे।"

(क़ुरआन, सूरा-65 तलाक़, आयत-7)

और नबी (सल्ल॰) का इरशाद है—

"और उनका तुमपर हक़ यह है कि दस्तूर के मुताबिक़ उन्हें खाना और कपड़ा दो।" (हदीस : मुस्लिम - 1218)

इस आयत के संदर्भ में फ़ुक़हा ने एक बहस यह उठाई है कि अगर कभी शौहर बीवी का ख़र्च बरदाश्त करने के क़ाबिल न रहे तो उसकी 'क़व्वामियत' बाक़ी नहीं रहती और इस दशा में बीवी को निकाह का बन्धन ख़त्म करवाने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसलिए कि वह मक़सद बाक़ी न रहा जिसकी बुनियाद पर निकाह शरीअत के मुताबिक़ और जाइज़ हुआ था। यह इमाम मालिक (रह॰) और इमाम शाफ़ई (रह॰) का मत है। इमाम अबू-हनीफ़ा (रह॰) कहते हैं कि औरत का ख़र्च बरदाश्त करने पर शौहर समर्थ न हो तब भी निकाह नहीं टूटेगा। इसलिए कि अल्लाह तआला का इरशाद है—

"और अगर वह तंगदस्त हो तो हाथ खुलने तक उसे मुहलत दो।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-280)

एक इल्मी सभा में एक महिला की तरफ़ से वर्तमान के मशहूर इस्लामी विद्वान मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी से सवाल किया गया कि "क़ुरआन

मजीद में 'मर्द क़व्वाम हैं' कहा गया है। इसके तहत बीवी का भरण-पोषण और सारे ख़र्च की ज़िम्मेदारी मर्द पर डाली गई है। सवाल यह है कि एक पति जो बेरोज़गार है और बीवी का आर्थिक (माली) बोझ नहीं उठा रहा है, या वह शारीरिक तौर से लाचार है और उसे शारीरिक सुरक्षा (Physical Protection) नहीं दे सकता, क्या फिर भी वह 'क़व्वाम' होगा?" इस सवाल का उन्होंने यह जवाब दिया—

"आप इससे भी ज़्यादा भयानक मिसाल पेश कर सकती हैं। एक आदमी अन्धा है या अपाहिज और विकलांग है। ख़ुद मदद व सहायता का मुहताज है। औरत उसकी ख़िदमत करती है और उसके ख़र्च बरदाश्त करती है तो क्या इस दशा में मर्द की हैसियत 'क़व्वाम' ही की होगी? इसका जवाब यह है कि क़ुरआन मजीद ने संरचना की हैसियत से मर्द को 'कव्वाम' कहा है। इसके दो कारण बयान किए हैं। एक यह कि अल्लाह ने मर्द को औरत पर श्रेष्ठता (फ़ज़ीलत) और उच्चता प्रदान की है। यह उच्चता और बरतरी शारीरिक, मानसिक और व्यावहारिक तीनों पहलुओं से या इनमें से एक या दो पहलू से हो सकती है। इसी बरतरी और उच्चता की वजह से इस्लाम ने औरत के मुक़ाबले में मर्द पर राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक ज़िम्मेदारियाँ भी अधिक डाली हैं। मर्द के 'क़व्वाम' होने की दूसरी वजह यह बताई गई है कि वह औरत पर अपना माल ख़र्च करता है। यह एक आम बात है। इसके कुछ अपवादी उदाहरण भी हर दौर में रहे हैं। आज भी मौजूद हैं कि एक औरत मानसिक और शारीरिक लिहाज़ से मर्द से बेहतर है और उसकी आर्थिक हालत भी मज़बूत है और पति पर ख़र्च भी कर रही है। इसके बावजूद मर्द के 'कव्वाम' होने की हैसियत ख़त्म नहीं हो जाएगी। वरना मर्द अगर अपने मर्द होने की वजह से और औरत अपनी आर्थिक हैसियत की वजह से आपस में टकराने लगें तो घर की व्यवस्था तहस-नहस होकर रह जाएगी।"[46]

निगहबान, न कि दारोग़ा

इस व्याख्या से स्पष्ट हुआ कि पति की हैसियत ख़ानदान में सबसे बड़े निगहबान की है जिसके अधीन बीवी, बच्चे और अन्य सम्बन्धीगण पूरी आज़ादी के साथ अपने सारे काम करते हैं। पति उनका भरण-पोषण और देख-रेख करता है, उन्हें सुरक्षा प्रदान करता है, उन्हें दुनिया की ग़लत चीज़ों से बचाता है, अगर उनको किसी मामले में धर्म से फिरा हुआ पाता है तो उनके सुधार की कोशिश करता है, अगर उनसे किसी मामले में कोई कोताही हो जाती है तो उन्हें समझाता-बुझाता है और अगर वे अपने इस रवैये से नहीं रुकते हैं तो उन्हें डाँट-फटकार लगाता है। उसकी मिसाल रेवड़ के चरवाहे जैसी है कि वह रेवड़ में शामिल तमाम भेड़-बकरियों पर नज़र रखता है, उनकी देखभाल करता है, उन्हें भेड़ियों के हमलों से बचाता है और अगर उनमें से कोई इधर-उधर भागने की कोशिश करती है तो उसे हाँककर रेवड़ में शामिल करता है। एक हदीस में (जो पहले गुज़र चुकी है) यही अर्थ लिया गया है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "मर्द अपने घरवालों का निगहबान है और उससे उसके रैयत (अधीन) के बारे में पूछा जाएगा।"
>
> (हदीस : बुख़ारी - 7137, मुस्लिम - 1829)

शैख़ मुहम्मद अब्दुहु (रह॰) इस पहलू पर रौशनी डालते हुए कहते हैं—

> "इस आयत में 'क़व्वामियत' से मुराद वह मार्गदर्शन है, जिसमें अधीन व्यक्ति अपने पूरे इरादे और अधिकार के साथ अपना काम अन्जाम देता है। इसका मतलब यह नहीं है कि इसमें अधीन व्यक्ति पूरी तरह मजबूर होता है, वह किसी इरादे और अधिकार का मालिक नहीं होता और सिर्फ़ वही काम करता है जिसकी हिदायत उसका नेतृत्व करनेवाला उसे देता है। किसी व्यक्ति के दूसरे पर 'क़व्वाम' होने का मतलब यह है कि वह उसे जिन कामों का मार्गदर्शन करता है, उनको लागू करने के सिलसिले में उसकी देख-रेख और निगरानी रखता है।"[47]

4. औरत को पति के आज्ञानुपालन की ताकीद

दूसरी तरफ़ औरतों को ताकीद की गई है कि वे मर्दों की आज्ञा का पालन करें। उनपर स्पष्ट कर दिया गया है कि मर्दों को 'क़व्वामियत' की जो ज़िम्मेदारी दी गई है उसमें औरतों का हक़ नहीं मारा गया है और न इससे उनकी कोई बेइज़्ज़ती और तौहीन होती है। बल्कि ऐसा सिर्फ़ पारिवारिक व्यवस्था को दुरुस्त और ठीक-ठाक बनाने के लिए किया गया है। इसलिए उन्हें चाहिए कि अपने पतियों का कहा मानें, उनके हुक्मों की पाबन्दी करें, उन्हें खुश रखें और किसी मामले में सरकशी न दिखाएँ। अल्लाह का इरशाद है—

"फ़स्सॉलिहातु क़ानितातुन हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैबि बिमा हफ़िज़ल्लाह"

"अतः जो नेक औरतें हैं, वे आज्ञा का पालन करनेवाली होती हैं और मर्दों के पीछे, अल्लाह की हिफ़ाज़त और निगरानी में उनके (यानी अपने शौहरों के) हक़ों की हिफ़ाज़त करती हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

आयत के इस टुकड़े में नेक औरतों के दो गुण बयान किए गए हैं। एक गुण है 'क़ानितात' यानी 'आज्ञा का पालन करनेवाली'। 'क़ुनूत' का शाब्दिक अर्थ 'आज्ञा का पालन करना' है। क़ुरआन में अन्य स्थानों पर इसका प्रयोग 'अल्लाह का आज्ञापालन' के अर्थों में हुआ है।[48]

क़ुरआन के कुछ टीकाकारों ने लिखा है कि यहाँ भी वह इसी अर्थ में है, जबकि कुछ दूसरे कहते हैं कि 'आज्ञापालन' करने में अल्लाह के आज्ञापालन के साथ पति का आज्ञापालन भी शामिल है। क़तादा का कथन है—

"'क़ानितात' का मतलब यह है कि वे अल्लाह और अपने पतियों का आज्ञापालन करनेवाली हैं।"[49]

वाहिदी कहते हैं—

"शब्द 'क़ुनूत' का अर्थ 'आज्ञानुपालन' की नीति अपनाने के हैं।

इसमें अल्लाह का आज्ञानुपालन और पतियों का आज्ञानुपालन दोनों सम्मिलित हैं।"[50]

इमाम राज़ी (रह॰) ने लिखा है—

"आयत के इस टुकड़े के दो मतलब हो सकते हैं। एक यह कि 'क़ानितात' का अर्थ है 'अल्लाह का आज्ञापालन करनेवालियाँ' और 'हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैब' का मतलब है 'पतियों के हक़ अदा करनेवालियाँ। यहाँ पहले अल्लाह के हक़ की अदायगी की बात कही गई है, बाद में पतियों के हक़ों की बात कही गई है। दूसरा मतलब यह हो सकता है कि पूरे टुकड़े में पति के हक़ों (अधिकारों) का ज़िक्र है। 'क़ानितात' का मतलब यह है कि वे पतियों की मौजूदगी में उनकी आज्ञा का पालन करती हैं और 'हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैब' का मतलब यह है कि वे उनकी (अपने पतियों की) अनुपस्थिति में उनके अधिकारों की रक्षा करती हैं।"[51]

नेक औरतों का दूसरा गुण यह बयान किया गया है कि वे 'हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैब' यानी ग़ैब (परोक्ष) की हिफ़ाज़त करनेवालियाँ हैं। ग़ैब का एक अर्थ पति की अनुपस्थिति है, अर्थात पति की अनुपस्थिति में वे अपने आपकी, बच्चों की और पतियों के घर और धन-सम्पत्ति की रक्षा करती हैं।

ज़मख़्शरी फ़रमाते हैं—

"ग़ैब मौजूदगी का उल्टा है, यानी जब उनके पति उनके पास मौजूद नहीं होते हैं तो वे उनकी अनुपस्थिति में उनकी चीज़ों की रक्षा करती हैं।"[52]

इब्ने-अतिय्या (रह॰) ने इस भाव को कुछ और विस्तार दिया है। उनके अनुसार शब्द 'ग़ैब' में हर वह चीज़ शामिल है जिसका पति को ज्ञान न हो, चाहे वह उसकी उपस्थिति में हो या अनुपस्थिति में। कहते हैं—

"'ग़ैब' से अभिप्राय (मुराद) हर वह चीज़ है जिसका पति को ज्ञान न हो और जो उसकी निगाह से छिपी हुई हो। इसमें दोनों स्थितियाँ शामिल हैं। वह कहीं बाहर गया हो या मौजूद हो।"[53]

ग़ैब का दूसरा अर्थ 'राज़' है। इस स्थिति में 'हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैब' का मतलब यह होगा कि वे रहस्यों (छिपी बातों) की हिफ़ाज़त करनेवाली हैं।

अल्लामा आलूसी (रह॰) ने लिखा है—

"इसका एक दूसरा अर्थ यह बताया गया है कि वे अपने-अपने पतियों के राज़ों यानी जो कुछ उनके पतियों और उनके बीच एकान्त में होता है, उसकी हिफ़ाज़त करनेवाली हैं।"[54]

शैख़ मुहम्मद अब्दुहु (रह॰) फ़रमाते हैं—

"ग़ैब से मुराद यहाँ वह बात है जिसको ज़ाहिर करने में शर्म आए, यानी वे हर उस चीज़ को छिपाती हैं जिसका सम्बन्ध दाम्पत्य मामलों से हो और जो उनके पतियों और उनके बीच ख़ास हो।"[55]

अल्लामा रशीद रज़ा ने इस आयत को क़ुरआन की सबसे अधिक व्यापक और मानी रखनेवाली आयत क़रार देते हुए लिखा है कि—

"इससे पति-पत्नी के बीच एकान्त में जो कुछ होता है उसको छिपाने की अनिवार्यता (वाजिब होना) साबित होती है।"[56]

यही मतलब मौलाना अमीन अहसन इस्लाही (रह॰) ने भी लिखा है। फ़रमाते हैं—

"'हाफ़िज़ातुल-लिलग़ैब' का मतलब मैंने यह लिया है कि वे राज़ों (रहस्यों) की हिफ़ाज़त करनेवाली हैं। यह अर्थ लेने की एक वजह तो यह है कि 'ग़ैब' का शब्द 'रहस्य' के अर्थ में मशहूर है। दूसरी वजह यह है कि यहाँ वार्ताशैली ऐसी है कि 'पीठ-पीछे' का अर्थ लेने की गुन्जाइश नहीं। तीसरी यह कि औरत और मर्द के बीच रहस्यों और राज़ों की अमानतदारी का मसला (मामला) सबसे ज़्यादा अहमियत रखनेवाला मामला है। ये दोनों एक-दूसरे के नैसर्गिक (क़ुदरती) अमानतदार हैं। ख़ास तौर से औरत का मक़ाम तो यह है कि वे मर्द की अच्छाइयों व बुराइयों, उसके घर-बार उसके माल व दौलत और उसकी इज़्ज़त व आबरू हर चीज़ की ऐसी राज़दार

है कि अगर वह उसका पर्दा चाक करने पर आ जाए तो मर्द बिलकुल ही नंगा होकर रह जाए। इस वजह से क़ुरआन ने इस गुण का ख़ास तौर पर उल्लेख किया है।"[57]

अबू-हय्यान ने अता और क़तादा से सम्बन्धित करके जो कथन उद्धृत किया है उसमें ये दोनों भाव सम्मिलित हैं–

"वे हिफ़ाज़त करती हैं उस चीज़ की जिसका उनके पतियों को ज्ञान न हो, वे अपने-आपकी रक्षा करती हैं और जो कुछ उनके पतियों और उनके बीच होता है उसे इधर-उधर बयान नहीं करतीं।" [58]

आयत के इस टुकड़े की व्याख्या में टीकाकारों ने सामान्यतः एक हदीस उद्धृत की है। हज़रत अबू-हुरैरा (रजि॰) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से पूछा गया, "कौन-सी औरत सबसे बेहतर है?" इसके जवाब में आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"वह औरत जिसका पति उसकी तरफ़ देखे तो खुश हो जाए, वह उसे किसी काम का आदेश दे तो उसपर अमल करे और स्वयं अपने बारे में या उस माल के बारे में जो उसकी अमानत (धरोहर) में है, पति की मरज़ी के ख़िलाफ़ कोई काम न करे।"

(हदीस : सुनन नसई - 3231, मुसनद अहमद - 2/251)

पति की आज्ञा के पालन में यह बात भी शामिल है कि जब वह यौन-सम्बन्ध बनाने की इच्छा प्रकट करे तो आम हालात में पत्नी उससे आना-कानी न करे। विवाह-सम्बन्ध का उद्देश्य और मक़सद ही यह है कि पति-पत्नी वैध सीमाओं में रहते हुए एक-दूसरे के ज़रिए यौन-सन्तुष्टि प्राप्त करें।

कई हदीसों में इसकी ताकीद की गई है। हज़रत अबू-हुरैरा (रजि॰) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"अगर मर्द अपनी पत्नी को अपने बिस्तर पर बुलाए और वह आने से इनकार कर दे तो फ़रिश्ते उसपर सुबह तक लानत करते रहते हैं।" (हदीस : बुख़ारी - 5193, मुस्लिम - 1436)

हज़रत तलक़-बिन-अली (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"अगर मर्द अपनी पत्नी को अपनी ज़रूरत से बुलाए तो वह (फ़ौरन) उसके पास चली जाए, चाहे (उस वक़्त) तन्दूर पर बैठी हो।" (हदीस : तिरमिज़ी - 1159)

5. मर्द को पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार अपनाने का निर्देश

इस्लाम ने पुरुषों को निर्देश दिया है कि वे अपनी पत्नियों के साथ अच्छा व्यवहार करें। वे उनकी नौकरानियाँ नहीं हैं कि उनको अपने से कमतर समझें, उनकी बेइज़्ज़ती और अपमान करें या उनको शारीरिक या मानसिक तकलीफ़ें दें। पति-पत्नी दोनों अलग-अलग ख़ानदानों से आकर एक ख़ानदान बनाते हैं। उनके बीच मिज़ाज और स्वभाव का फ़र्क़ होना बिलकुल मुमिकन है। इसलिए अगर पत्नी की कोई बात या कोई रवैया पति को नागवार महसूस हो तो उससे नफ़रत न करने लगे, बल्कि उसके साथ मुहब्बत, शराफ़त और हमदर्दी के साथ पेश आए। अल्लाह तआला का फ़रमान है—

"उनके (यानी स्त्रियों के) साथ भले तरीक़े से ज़िन्दगी बसर करो। अगर वे तुम्हें नापसन्द हों, तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो, मगर अल्लाह ने उसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-19)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"औरतों के साथ अच्छा बरताव करो।"

(हदीस : बुख़ारी - 5186, मुस्लिम - 1468)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) ही से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"कोई ईमानवाला मर्द (पति) किसी ईमानवाली औरत (पत्नी) से

नफ़रत न करे। अगर उसकी कोई आदत उसे बुरी लगेगी तो दूसरी आदत उसके नज़दीक पसन्दीदा होगी।"

(हदीस : मुस्लिम - 1469)

अनेक हदीसों में मर्दों को अपनी पत्नियों के साथ अच्छा बरताव करने और प्रेम और मुहब्बत के साथ पेश आने की ताकीद की गई है। उम्मुल-मोमिनीन हज़रत आइशा (रज़ि॰) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"तुममें बेहतर शख़्स वह है जो अपने घरवालों के लिए बेहतर हो, और मैं तुममें बेहतर हूँ अपने घरवालों के मामले में।"

(हदीस : तिरमिज़ी - 3895)

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"ईमानवालों में सबसे मुकम्मल ईमानवाले वे हैं जो अख़लाक़ (आचरण) के मामले में बेहतर हों, और तुममें बेहतर वे हैं जो अपनी औरतों के साथ सबसे अच्छा अख़लाक़ (आचरण) दिखाएँ।"

(हदीस : तिरमिज़ी - 1162)

6. औरतों के प्रति हिंसा न अपनाने के स्पष्ट आदेश

इस्लाम ने पत्नियों के साथ अच्छा बरताव करने और उनसे नफ़रत न करने की आम हिदायतें ही नहीं दीं हैं, बल्कि स्पष्ट आदेशों के द्वारा पतियों को उनपर अत्याचार और मार-पीट करने से रोका है। इस विषय की कुछ हदीसें देखें—

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-ज़ुमआ (रजि॰) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"तुममें से कोई आदमी अपनी पत्नी को इस तरह न मारे जिस तरह गुलाम को मारता है, क्योंकि फिर वह दिन गुज़रने के बाद उसके साथ रात गुज़ारेगा।" (हदीस : बुख़ारी - 5204, मुस्लिम - 2855)

हज़रत लक़ीत-बिन-सबरा (रज़ि॰) बयान करते हैं—

"एक मौक़े पर मैंने नबी (सल्ल॰) से निवेदन किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी बीवी की ज़बान ठीक नहीं, यानी वह बद-ज़बान है। आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "उसे तलाक़ दे दो।" मैंने निवेदन किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! वह काफ़ी समय मेरे साथ गुज़ार चुकी है और उससे मेरे बच्चे भी हैं। नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "उसे समझाओ-बुझाओ, अगर उसमें कुछ भी ख़ैर (अच्छाई) होगी तो वह तुम्हारी मरज़ी के काम करने लगेगी। अपनी घरवाली को इस तरह हरगिज़ न मारो, जिस तरह अपनी लौंडी को मारते हो।" (हदीस : अबू-दाऊद - 142)

इन हदीसों में बीवी को मारने को नापसन्द, ग़लत और नफ़रत के क़ाबिल काम की हैसियत से पेश करने के लिए मनोवैज्ञानिक उपाय अपनाया गया है। शैख़ रशीद रज़ा (मृ॰ 1354 हि॰) ने इस विषय की कई हदीसें बयान करने के बाद लिखा है—

"ये हदीसें मर्द को याद दिलाती हैं कि अगर वह जानता है कि उसे आइन्दा ज़रूर अपनी बीवी से मिलना और ख़ास ताल्लुक़ बनाना है वह ताल्लुक़ जो दो इनसानों के बीच पाया जानेवाला सबसे मज़बूत और दृढ़ सम्बन्ध होता है और उसके द्वारा दोनों के बीच पूर्ण एकता हो जाती है और उनमें से हर एक को यह एहसास होता है कि उसका सम्बन्ध दूसरे से उससे ज़्यादा मज़बूत है जितना उसके अपने शरीर के अंगों का एक-दूसरे के साथ होता है। अगर वह यह सम्बन्ध और एकत्व हक़ीक़त में महसूस करता है, जो फ़ितरत का तक़ाज़ा है—तो यह कैसे उसकी शान के मुताबिक़ होगा कि वह अपनी बीवी को जो उसके जैसी ही है, इतना रुसवा और बेहैसियत करे कि जितना उसका ग़ुलाम होता है कि वह उसे अपने कोड़े या हाथ से मारे। हक़ीक़त यह है कि शर्म रखनेवाले और बाइज़्ज़त मर्द का मिज़ाज ऐसी ज़्यादती करने से बचेगा और जिस औरत को वह लौंडी के दर्जे में कर दे उससे असाधारण एकत्व की माँग करने से उसकी तबीयत इनकार करेगी। इन हदीसों से ज़ाहिर होता है कि

औरतों को मारना इन्तिहाई बुरा और नापसन्दीदा काम है।''[59]

हज़रत अयास-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक मौक़े पर मर्दों को नसीहत की कि—

''अल्लाह की बान्दियों यानी अपनी औरतों को न मारो।''

इसी हदीस में आगे है कि एक बार कई लोगों ने अपनी बीवियों की पिटाई कर दी। अगले दिन वे औरतें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की बीवियों के घरों में इकट्ठा होकर अपने शौहरों की शिकायत करने लगीं। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) तक शिकायत पहुँची तो नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

''मुहम्मद के घरवालों के पास बहुत-सी औरतों ने चक्कर लगाए हैं और अपने शौहरों की शिकायत की हैं। ये लोग तुममें से अच्छे आदमी नहीं हैं।''

(हदीस : अबू-दाऊद - 2146,
इब्ने-माजा - 1985, दारमी - 2219)

हदीसों में ही नहीं, बल्कि क़ुरआन में भी औरतों पर ज़ुल्म व हिंसा न करने की नसीहत मिलती है। जिस आयत (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34) में बीवियों को डाँट-डपट के तौर पर कुछ जिस्मानी सज़ा देने की इजाज़त दी गई है, उसका आख़िरी टुकड़ा यह है : ''बेशक अल्लाह सबसे उच्च और महान है।'' इसमें अल्लाह का गुण ''अला'' (उच्च) और ''कबीर'' (महान) का चुनाव बड़ा ही अर्थपूर्ण है। यानी अल्लाह सबसे बुलन्द और सबसे बड़ा है। औरतों पर अपनी बड़ाई के नशे में उनपर किसी तरह की ज़्यादती न करो और यह न भूलो कि अल्लाह तुमसे बड़ा और महान है। उनपर ज़ुल्म व ज़्यादती की सूरत में वह तुमसे बदला ले सकता है।

इब्ने-कसीर (रह॰) लिखते हैं—

''इसमें मर्दों को धमकी दी गई है कि अगर उन्होंने अकारण औरतों पर ज़्यादती की तो अल्लाह जो बुलन्द और बरतर है, उनका वली (सरपरस्त) है। जो भी उनपर ज़ुल्म व ज़्यादती करेगा उससे वह बदला ले लेगा।''[60]

7. अनुचित हिंसा पर शौहरों को सज़ा दी जाएगी

इससे बढ़कर, इस्लामी शरीअत (धर्म-विधान) ने इस पहलू को भी अनदेखा नहीं किया है कि अगर कोई मर्द उपरोक्त इस्लामी शिक्षाओं पर अमल नहीं करता है और अपनी बीवी को अकारण सताता, उसके साथ मारपीट करता और चोटें पहुँचाता है तो औरत को हक़ है कि वह इस्लामी अदालत से फ़रियाद करे और जज पर लाज़िम है कि उसकी शिकायत ठीक पाए तो मर्द को सज़ा दे।

अलमौसुअतुल-फ़िक़हिया में है–

"फ़ुक़हा (इस्लामी धर्म-विधान के विद्वानों) ने कहा है कि शौहर अगर अपनी बीवी पर ज़ुल्म या अत्याचार करे तो हाकिम या जज उसे उससे रोकेगा। बड़े फ़क़ीहों ने स्पष्ट किया है कि जज या हाकिम इसपर शौहर को सज़ा दे सकता है।"[61]

अगर इन शिक्षाओं एवं हिदायतों पर सही तरीक़े से अमल किया जाए तो घरेलू हिंसा को आसानी के साथ कन्ट्रोल किया जा सकता है। जिन समाजों में इनपर अमल किया जाता है वे सुख-शान्ति का गहवारा होते हैं और उनमें रहनेवाले तमाम लोग हँसी-ख़ुशी ज़िन्दगी गुज़ारते हैं।

ग़ैरों के सितम, अपनों की मेहरबानियाँ

औरत की नाफ़रमानी और सरकशी की सूरत में सख़्ती करने और सज़ा देने की इजाज़त

इस्लाम ने पीछे ज़िक्र किए गए उपायों के साथ एक अपवाद भी रखा है, और वह यह कि पारिवारिक व्यवस्था में अगर औरत अपने शौहर की आज्ञा का पालन न करे और उद्दण्डता और विद्रोह का प्रदर्शन करे तो ऐसी सरकश और नाफ़रमान औरत को सुधारने और शिष्ट बनाने के लिए शौहर को उसे साधारण मनोवैज्ञानिक या शारीरिक सज़ा देने का हक़ है। अल्लाह तआला का फ़रमान है—

> "और जिन औरतों से तुम्हें सरकशी का अन्देशा हो उन्हें समझाओ, बिस्तरों पर उनसे अलग रहो और मारो। फिर अगर वे तुम्हारी आज्ञाकारी हो जाएँ तो ख़ामख़ाह उनपर हाथ उठाने के लिए बहाने तलाश न करो। यक़ीन रखो कि ऊपर अल्लाह मौजूद है, जो बड़ा और सबसे बढ़कर है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

इस आयत में डराने-धमकाने और सज़ा देने के कुछ तरीक़े बताए गए हैं। बिस्तर पर रहते हुए यौन सम्बन्ध बनाने से दूर रहना मनोवैज्ञानिक रूप से सज़ा देना है और मारना शारीरिक सज़ा है। इस्लाम की यह शिक्षा बहुत-से लोगों के दिमाग़ों में उलझन पैदा करती है और कुछ लोग इसे इस्लाम पर एतिराज़ करने का ज़रिआ बनाते हैं। इसलिए इसपर कुछ विस्तार से चर्चा करना मुनासिब मालूम होता है।

'नुशूज़' क्या है?

इस आयत में औरतों के सुधार से सम्बन्धित जिन उपायों का उल्लेख किया गया है उन्हें इस स्थिति में अपनाने का निर्देश दिया गया है, जब उनसे 'नुशूज़' हो।

'नुशूज़' क़ुरआन की मूल आयत अरबी में प्रयुक्त हुआ है। अरबी में 'नुशूज़' का शाब्दिक अर्थ है 'बुलन्द होना'। इस अर्थ में बुलन्द ज़मीन को 'नशाज़' कहते हैं।[62]

क़ुरआन में 'नुशूज़' का इस्तेमाल शौहर और बीवी दोनों के ताल्लुक़ से हुआ है।

शौहर का 'नुशूज़'

शौहर के नुशूज़ का मतलब है बीवी पर ज़ुल्म व अत्याचार करना। जौहरी कहते हैं–

"शौहर का नुशूज़ यह है कि वह बीवी को मारे और उसपर ज़ुल्म व अत्याचार करे।"[63]

ज़िजाज कहते हैं–

"शौहर का 'नुशूज़' यह है कि वह बीवी के साथ बुरा सुलूक करे, उसकी यौन-इच्छा पूरी न करे और उसके ख़र्च भी बरदाश्त न करे।"[64]

लिसानुल-अरब में है–

"शौहर के 'नुशूज़' का मतलब यह है कि वह बीवी की पिटाई करे, उसपर ज़ुल्म और अत्याचार करे और उसे नुक़सान पहुँचाए।"[65]

क़ुरआन के टीकाकारों ने भी इसी अर्थ का स्पष्टीकरण किया है।

मावरदी कहते हैं–

"शौहर का 'नुशूज़' यह है कि वह बीवी से द्वेष (शत्रुता) और नफ़रत के आधार पर खुद को उससे बुलन्द कर ले।"[66]

अबू-हय्यान अन्दुलिसी ने लिखा है–

"शौहर का 'नुशूज़' यह है कि वह बीवी के साथ बेरुख़ी से पेश आए, उसकी यौन-इच्छा पूरी न करे, उसके भरण-पोषण और ज़रूरतों का ख़र्च बरदाश्त न करे, उसके साथ प्यार और मुहब्बत का मामला न करे और गाली-गलौज या मार-पीट के ज़रिए उसे तकलीफ़ पहुँचाए।"[67]

बीवी का 'नुशूज़'

बीवी का 'नुशूज़' यह है कि वह ख़ुद को शौहर से बढ़कर समझे, उसका कहना न माने, जिस चीज़ का शौहर हुक्म दे उसके ख़िलाफ़ अमल करे और उससे नफ़रत (घृणा) करे। कुछ विद्वानों की टिप्पणियाँ पेश हैं—

जौहरी (मृ॰ 393 हि॰) कहते हैं—

"औरत के 'नुशूज़' का मतलब यह है कि वह अपने शौहर का कहना न माने और उससे नफ़रत का इज़हार करे।"[68]

इब्ने-फ़ारस (मृ॰ 395 हि॰) ने लिखा है—

" 'नश्ज़' अस्ल में बुलन्दी के अर्थ को सिद्ध करती है। साहित्य में 'रूपक' के तौर पर इसको उस औरत पर चरितार्थ किया जाने लगा जो शौहर का कहना न माने।"[69]

लिसानुल-अरब में है—

"'नुशज़तुल-मिरात' का अर्थ है— औरत शौहर से बुलन्द हो गई, उसको नापसन्द करने लगी, उसकी नाफ़रमानी करने लगी और उससे नफ़रत करने लगी।"[70]

राग़िब असफ़हानी (मृ॰ 502 हि॰) फ़रमाते हैं—

"औरत के 'नुशूज़' का मतलब है उसका अपने शौहर से नफ़रत करना और उसकी फ़रमाँबरदारी से ख़ुद को ऊँचा समझना।"[71]

क़ुरआन के टीकाकारों ने भी इसी अर्थ को माना है। कुछ कथन देखिए। क़ुरतबी रह॰ (मृ॰ 671 हि॰) फ़रमाते हैं—

"यानी वे नाफ़रमान हो जाएँ, और अल्लाह ने शौहरों की जो बात मानने और पालन करने का कर्म उनपर फ़र्ज़ किया है उससे ख़ुद को बुलन्द समझने लगें।"[72]

ख़ाज़िन रह॰ (मृ॰ 741 हि॰) ने लिखा है—

"औरत के 'नुशूज़' का मतलब है उसका अपने शौहर से नफ़रत करना, उसकी फ़रमाँबरदारी से मुँह मोड़ना।"[73]

अबू-हय्यान रह॰ (मृ॰ 745 हि॰) ने यह व्याख्या की है—

"नुशूज़ यह है कि औरत में टेढ़पन आ जाए, उसके अख़लाक़ में घमण्ड पैदा हो जाए, वह ख़ुद को अपने शौहर से बढ़कर समझने लगे।"[74]

इब्ने-कसीर (मृ॰ 774 हि॰) फ़रमाते हैं—

"'नुशूज़' का शाब्दिक अर्थ 'बुलन्द होना' है। 'नुशूज़' करनेवाली औरत वह है जो ख़ुद को अपने शौहर से बढ़कर समझे, उसका कहना न माने, उसकी उपेक्षा करे और उससे नफ़रत दिखाए।"[75]

क़ुरआन के उर्दू टीकाकारों में मौलाना अमीन अहसन इस्लाही (रह॰) (मृ॰ 1418 हि॰/1997 ई॰) ने 'नुशूज़' की क्या अच्छी व्याख्या की है, फ़रमाते हैं—

"'नुशूज़' का अर्थ सर उठाने के हैं, लेकिन इस लफ़्ज़ का ज़्यादा इस्तेमाल उस बग़ावत और सरकशी के लिए होता है जो किसी औरत की तरफ़ से उसके शौहर के मुक़ाबले में ज़ाहिर हो.....। 'नुशूज़' औरत की हर कोताही, गफ़लत या बेपरवाही या अपने-आप को और अपनी राय और शौक़ को ज़ाहिर करने की क़ुदरती ख़ाहिश को नहीं कहते हैं। 'नुशूज़' यह है कि औरत कोई ऐसा क़दम उठाती नज़र आए, जो मर्द की 'क़व्वामियत' को चैलेंज करनेवाला हो और जिससे घर के राज्य में अशान्ति और ख़लल पड़ने का अन्देशा हो।"[76]

औरत का 'नुशूज़' ज़बान से भी हो सकता है और कर्म से भी।[77]

क़ुरआन के टीकाकारों और फ़ुक़हा ने 'नुशूज़' के कुछ रूपों का उल्लेख किया है। उनमें से एक यह भी है कि बीवी-शौहर की यौन-इच्छा को पूरा करने में सहयोग करने से इनकार कर दे।[78]

लेकिन सही बात यह है कि इसमें शौहर की हर तरह की नाफ़रमानी शामिल है। शैख़ रशीद रज़ा (रह॰) लिखते हैं—

"ज़्यादातर फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने शरीअत के 'नुशूज़' की कुछ

सूरतें बताई हैं। मिसाल के तौर पर शौहर की यौन-इच्छा पूरी करने से इनकार कर देना, घर से बग़ैर किसी ज़रूरत के निकलना, शौहर के कहने के बावजूद सजावट और शृंगार न करना, धार्मिक फ़र्ज़ों से लापरवाही बरतना वग़ैरा। ज़ाहिर है कि 'नुशूज़' का भाव इससे ज़्यादा विस्तृत है। यह हर उस नाफ़रमानी पर होगा, जिसका कारण ख़ुद को बड़ा समझना और शौहर के हुक्म से बग़ावत करना हो।"[79]

'नुशूज़' का हल

अगर शौहर-बीवी के दिल फट जाएँ, उनके बीच प्यार-मुहब्बत बाक़ी न रहे और वे एक-दूसरे के हक़ अदा करने से बेपरवाह हो जाएँ तो इसका आख़िरी हल तो यह है कि उनके बीच वैवाहिक सम्बन्ध ख़त्म हो जाए और हर एक अपना-अपना रास्ता ले, लेकिन इस्लाम इससे पहले बिगड़े हुए सम्बन्धों को सुधारने की कोशिश करता है। इसके लिए उसने एक प्रस्ताव यह दिया है कि परिवार के बुज़ुर्ग शौहर-बीवी के बीच सुलह-सफ़ाई करा दें।

"और अगर तुम लोगों को कहीं शौहर और बीवी के सम्बन्ध बिगड़ जाने का अन्देशा हो तो एक फ़ैसला करनेवाला मर्द के रिश्तेदारों में से और एक औरत के रिश्तेदारों में से नियुक्त करो, वे दोनों सुधार करना चाहेंगे तो अल्लाह उनके बीच सुलह और सहमति की सूरत निकाल देगा। अल्लाह सब कुछ जानता और बाख़बर है।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-35)

लेकिन इससे भी पहले इस्लाम पूरी कोशिश करता है कि मामला घर के अन्दर ही सुलझ जाए और शौहर-बीवी के बीच के झगड़े या नफ़रत के बारे में बाहर के किसी व्यक्ति को ख़बर न होने पाए। अतः वह बीवी को मशवरा देता है कि अगर वह शौहर की ओर से 'नुशूज़' या मुँह फेरने का अन्देशा महसूस करे तो उसके साथ मिलकर सफ़ाई कर ले—

"अगर किसी औरत को अपने शौहर से बुरे व्यवहार या बेरुख़ी का ख़तरा हो तो इसमें कोई हरज नहीं कि शौहर-बीवी आपस में अपने

कुछ हक़ों को कम-ज़्यादा करके सुलह कर लें। सुलह हर हाल में बेहतर है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-128)

इसी तरह वह शौहर को भी हिदायत देता है कि बीवी की ओर से 'नुशूज़' ज़ाहिर हो तो उसका सुधार करने की कोशिश करे।

सुधार के उपाय

औरतों के 'नुशूज़' (सरकशी और नाफ़रमानी) की सूरत में क़ुरआन ने मार्गदर्शन किया है कि उनके शौहर उनके सुधार के लिए तीन उपाय अपना सकते हैं। पहला : उन्हें समझाएँ-बुझाएँ। दूसरा : बिस्तरों पर उनसे अलग हो जाएँ। तीसरा : उन्हें मारें।

बिस्तर पर अलग होने का मतलब

दूसरा उपाय क़ुरआन ने यह बताया है कि 'बिस्तरों पर उनसे अलग हो जाओ।' इसकी व्याख्या में टीकाकारों के विभिन्न कथन मिलते हैं—

पहला : यह स्त्री-संभोग (हमबिस्तरी) से अलग रहने की ओर संकेत है। (यह इब्ने-अब्बास (रज़ि॰), सईद-बिन-जुबैर (रज़ि॰) और मक़ातिल का कथन है)

दूसरा : इससे अभिप्राय बात-चीत करना छोड़ देना है। (यह इकरिमा, ज़ह्हाक, सुद्दी व सौरी से उद्धृत है)

तीसरा : इससे मुराद यह है कि उनका बिस्तर अलग कर दिया जाए। (यह कथन हसन, शअबी, मुजाहिद, नख़ई, मुक़्सिम और क़तादा से उद्धृत है)

चौथा : इससे अभिप्राय यह है कि उनसे सख़्ती और बेरुख़ेपन से बात की जाए। (यह इब्ने-अब्बास (रज़ि॰), हसन, इक़्रिमा, सुफ़ियान (रज़ि॰) से उल्लिखित है)[80]

अल्लामा अबू-जाफ़र तबरी (रह॰) ने इसका मतलब यह बताया कि रस्सी से बाँध दिया जाए। उनके नज़दीक बिस्तर पर अलग रहने के लिए जो शब्द 'वहजुरूहुन्ना' आया है, वह 'हिजार' से बना है। 'हिजार' उस रस्सी को

कहते हैं, जिससे ऊँट को बाँधा जाता है। उन्होंने अन्य कथनों के मुक़ाबले में इस कथन को प्राथमिकता दी है।[81]

ज़मख़्शरी ने इसकी आलोचना करते हुए कहा है–

"यह निरर्थक और बेकार की व्याख्या करनेवालों की टीका है।"[82]

अल्लामा इब्ने-अरबी ने भी तबरी पर सख़्त तनक़ीद की है। उन्होंने लिखा है : 'अफ़सोस, क़ुरआन और हदीस के विद्वान ने कैसी अर्थहीन (बेकार) बात कही है। हैरानी है कि उलूम (ज्ञान) की गहराई और अरबी शब्दकोश में महारत रखने के बावजूद कैसे वे सही बात तक नहीं पहुँच सके और ठीक बात से हट गए।"[83]

अल्लामा इब्ने-अरबी ने और आगे लिखा है कि "हमने अरबी भाषा में इस शब्द के तमाम इस्तेमाल तलाश किए, तो उनकी संख्या सात पाई। इन तमाम शब्दों पर हमने ग़ौर किया तो इस नतीजे तक पहुँचे कि सभी में एक संयुक्त अर्थ पाया जाता है और वह है किसी चीज़ से दूरी। इसकी रौशनी में आयत के इस टुकड़े का अर्थ यह होगा कि उन्हें बिस्तरों पर अपने से दूर कर दो।"

आगे इस बुनियादी अर्थ की रौशनी में इब्ने-अरबी ने तावीलों (स्पष्टीकरणों) पर टिप्पणी की है।[84]

अल्लामा रशीद रज़ा (रह॰) ने क़ुरआन के टीकाकारों की बाल की खाल निकालने पर अच्छी समालोचना की है। लिखते हैं–

"उस्ताद इमाम (शैख़ मुहम्मद अब्दुह रह॰) ने बिस्तरों पर उन्हें अलग रखने पर कोई बहस नहीं की है। इसलिए कि यह बिलकुल स्पष्ट है। हैरत होती है कि टीकाकारों ने ऐसी स्पष्ट बातों की व्याख्याओं में जिन्हें अनपढ़ भी समझ लेते हैं, कितनी अटकल से काम लिया है। तुम किसी मामूली आदमी से कहो कि फ़ुलाँ आदमी अपनी पत्नी को बिस्तर, शयन-कक्ष, आराम करने की जगह या सोने की जगह में छोड़े रहता है तो वह तुम्हारे मतलब को बख़ूबी समझ लेगा। लेकिन टीकाकारों ने इस वाक्य से विभिन्न बातें समझी हैं।

कुछ टीकाकारों ने जो बात इशारे से समझ में आ रही थी, उसे स्पष्ट शब्दों में बयान कर दिया है। इस तरह उन्होंने अल्लाह की किताब में पाई जानेवाली शिष्टता को आहत कर दिया है। कुछ ने कहा है : इसका मतलब यह है कि उनके कमरों को, जहाँ वे सोती हैं, छोड़ दो। कुछ टीकाकारों ने लिखा है कि 'फ़िलमज़ाजिअ्' से मुराद 'बसबबुल-मज़ाजिअ' है, यानी उनसे सम्बन्ध तोड़ लो इस कारण से कि वे बिस्तरों पर तुम्हारा कहना नहीं मानतीं। यह 'नुशूज़' के अर्थ में हो गया, फिर इसमें सज़ा का अर्थ कहाँ पाया गया? बहुत से टीकाकारों ने (अरबी में प्रयुक्त शब्द) 'हजर' को रस्सी से बाँधने के अर्थ में लिया है, यानी उन्हें रस्सी से जकड़कर उस क़ाम पर मजबूर करो जिससे वे इनकार कर रही हैं। ज़मख़्शरी ने इस व्याख्या को (अरबी भाषा में) 'सक़ला' (यानी बेकार की व्याख्या करनेवालों) की व्याख्या कहा है। इसका सही अर्थ-- ऐ पाठको! --वही है जो तुम्हारी समझ में आया है और हर उस व्यक्ति की समझ में आता है, जो इनका शाब्दिक अर्थ जानता है। तुम कह सकते हो कि इस इबारत से, स्पष्ट रूप में, वे बहुत-से अर्थ नहीं निकलते हैं जिनका बहुत-से टीकाकारों ने अर्थ निकाला है।''[85]

मारने का मक़सद तंबीह करना है न कि हिंसा

सम्बन्ध तोड़ देने से भी नाफ़रमान औरत का सुधार न हो तो क़ुरआन ने तीसरा उपाय यह बताया है कि उसे कुछ शारीरिक सज़ा दी जाए। यहाँ ग़ौर करने की बात यह है कि मारने का हुक्म नहीं दिया गया है कि आम हालतों में बीवी की ज़रूर पिटाई की जाए, बल्कि ख़ास परिस्थिति में, जब उसकी सरकशी और नाफ़रमानी हद से ज़्यादा बढ़ गई हो तो शौहर को इजाज़त दी गई है कि अगर अन्य उपायों से काम न चले तो मजबूरी की स्थिति में बीवी को बहुत मामूली और हल्की जिसमानी सज़ा दे सकता है। साथ ही यह भी नज़र में रखने की ताकीद की गई है कि इस शारीरिक सज़ा का मक़सद तंबीह करना है न कि पत्नी पर ज़ुल्म ढाना और उसपर हिंसा करते रहना। इसी वजह से इस मामले में ग़ैर-मामूली सावधानी बरतने का

हुक्म दिया गया है।

हज़रत जाबिर (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हिज्जतुल-विदाअ (आख़िरी हज) में भाषण दिया तो उसमें यह भी कहा—

"औरतों के मामले में अल्लाह से डरो। तुमने उन्हें अल्लाह की अमान में लिया है और उनके गुप्तांग तुम्हारे लिए अल्लाह के कलिमे के द्वारा हलाल हुए हैं। तुम्हारा हक़ उनपर यह है कि वे तुम्हारे बिस्तरों पर ऐसे किसी व्यक्ति को न आने दें, जिसे तुम नापसन्द करते हो। अगर वे ऐसा करें तो उन्हें ऐसी मार मारो कि उनके जिस्म पर कोई निशान ज़ाहिर न हो और उनका हक़ तुमपर यह है कि उन्हें दस्तूर के मुताबिक़ खाना-कपड़ा दो।"

(हदीस : मुस्लिम - 1218)

इमाम तिरमिरज़ी ने हज़रत अम्र-बिन-अल-अहवस (रज़ि॰) के वास्ते से यह आख़िरी हज का भाषण नक़्ल किया है। इसके शब्द कुछ अलग हैं। इसमें है—

"मगर यह कि वे किसी खुली बेहयाई का काम करें। अगर वे ऐसा करें तो उन्हें बिस्तरों में अकेला छोड़ दो और उन्हें मारो, ऐसी मार जिसका जिस्म पर कोई निशान ज़ाहिर न हो।"

(हदीस : तिरमिरज़ी - 1163)

मूल अरबी हदीस में शब्द 'बर्रह' इस्तेमाल हुआ है। इस शब्द का अर्थ है "सख़्ती करना' 'तकलीफ़ पहुँचाना'। 'ज़र्बे-मुबर्रह' उस मार को कहते हैं जिसमें सख़्त चोट लगे। हदीस में इससे मना किया गया है।[86]

अबू-हय्यान कहते हैं—

"'ज़र्बे-ग़ैर-मुबर्रह' से मुराद वह मार है जिससे न कोई हड्डी टूटे, न कोई अंग भंग हो और न जिस्म पर उसका कोई निशान बाक़ी रहे।"[87]

हज़रत इब्ने-अब्बास से उनके शिष्य अता ने पूछा, 'ज़र्बे-ग़ैर-मुबर्रह' से मुराद क्या है? उन्होंने जवाब दिया : दातुन जैसी चीज़ से मारना।[88]

मारने का मक़सद औरत को बेइज़्ज़त व रुसवा करना या उसे जिसमानी तकलीफ़ पहुँचाना नहीं, बल्कि उसका सुधार करना और अदब सिखाना है। इसलिए विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि शौहर मारने में जहाँ तक हो सके पूरी सावधानी बरते। जैसे चेहरे पर न मारे, एक ही जगह न मारे, लाठी-डंडे से न मारे, बल्कि हाथ से, रुमाल से या किसी और हल्की चीज़ से मारे जिससे जिस्म पर कोई निशान न पड़े। इमाम राज़ी (रह॰) ने मारने में विभिन्न सावधानियाँ बताने के बाद लिखा है—

"हासिल यह है कि इस सिलसिले में ज़्यादा-से-ज़्यादा न्यूनता अपनाई जाए।"[89]

सुधार के उपाय अपनाने में चरणबद्धता

एक बात यह भी ध्यान में रखने की है कि क़ुरआन का मंशा यह मालूम होता है कि उपरोक्त सुधार के उपायों में चरणबद्धता को ध्यान में रखा जाए। ऐसा न हो कि औरत की तरफ़ से नाफ़रमानी का इज़हार होते ही एकदम तीनों उपायों पर अमल कर लिया जाए, या शौहर जब जिस चीज़ को चाहे कर डाले। मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह॰) ने लिखा है—

"यह मतलब नहीं है कि तीनों काम एक ही वक़्त में कर डाले जाएँ, बल्कि मतलब यह है कि 'नुशूज़' की हालत में इन तीनों उपायों को अपनाने की इजाज़त है। अब रहा उनपर अमल करना तो बहरहाल इसमें क़ुसूर और सज़ा के बीच अनुकूलता होनी चाहिए और जहाँ हल्के उपाय से सुधार हो सकता हो वहाँ सख़्त उपाय से काम न लेना चाहिए।"[90]

मौलाना शब्बीर अहमद उसमानी (रह॰) ने लिखा है—

"यानी अगर कोई औरत शौहर से बुरा सुलूक करे तो पहला दर्जा तो यह है कि मर्द उसको ज़बान से समझाए-बुझाए। अगर न माने तो दूसरा दर्जा यह है कि अलग सोए, लेकिन उसी घर में। इसपर भी न माने तो आख़िरी दर्जा यह है कि उसको मारे भी...हर ग़लती का एक दर्जा है, उसी के मुताबिक़ तादीब या डाँट-फटकार करने की

इजाज़त है, जिसके तीन दर्जे क्रमानुसार आयत में उल्लिखित हैं।''[91]

मौलाना अमीन अहसन इस्लाही (रह॰) तीनों उपायों का उल्लेख करने के बाद लिखते हैं–

''क़ुरआन के बयान करने का अन्दाज़ इस बात की दलील है कि इन तीनों में क्रम और दर्जाबन्दी को ध्यान में रखा जाए।''[92]

पुराने टीकाकारों ने भी उपरोक्त सुधार के उपायों में क्रम को ध्यान में रखने पर ज़ोर दिया है और लिखा है कि अगर हल्के उपाय से काम चल सकता है तो सख़्त उपाय को नहीं अपनाना चाहिए।

इमाम राज़ी (रह॰) लिखते हैं–

''आयत से मालूम होता है कि अल्लाह ने पहले समझाने का हुक्म दिया है फिर उससे आगे बढ़कर बिस्तरों में तन्हा छोड़ने को कहा है, फिर उससे आगे बढ़कर मारने का हुक्म दिया है। यह ऐसी चेतावनी है जिससे लगभग स्पष्ट पता चलता है कि जहाँ तक हल्के तरीक़े से मक़सद हासिल हो वहाँ तक उसे काफ़ी समझना ज़रूरी है। उसे छोड़कर सख़्त तरीक़े को अपनाना जाइज़ नहीं है।''[93]

इब्ने-अतिय्या (रह॰) (मृ॰ 542 हि॰) ने लिखा है–

''समझाना, तन्हा छोड़ना और मारना, तीनों कामों में क्रम है। किसी एक उपाय से औरत फ़रमाँबरदारी करने लगे तो अन्य उपाय न अपनाएँ।''[94]

अल्लामा बैज़ावी (रह॰) (मृ॰ 685 हि॰) कहते हैं–

''तीनों उपायों में क्रमबद्धता है। उन्हें अपनाने में चरणबद्धता को ध्यान में रखना ज़रूरी है।''[95]

अल्लामा आलूसी (रह॰) (मृ॰ 1270 हि॰) ने लिखा है–

''सन्दर्भ और प्रसंग से पता चलता है कि इन तीनों उपायों में क्रमबद्धता है। चुनांचे जब औरत की सरकशी साबित हो जाए तो

पहले उसे नसीहत की जाएगी, फिर तन्हा छोड़ा जाएगा, फिर मारा जाएगा।"[96]

अल्लामा इब्ने-जौज़ी (मृ॰ 597 हि॰) ने कुछ विद्वानों का यह कथन नक़ल किया है—

"आयत में क्रम है। समझाया उस वक़्त जाएगा जब सरकशी और नाफ़रमानी का अन्देशा हो, तन्हा उस वक़्त छोड़ा जाएगा जब सरकशी की शुरुआत हो, और मारा उस वक़्त जाएगा जब बार-बार सरकशी करे, सरकशी की शुरुआत ही में मारना जाइज़ नहीं।"[97]

क़ाज़ी इब्नुल-अरबी अल-मालिकी (मृ॰ 543 हि॰) ने इस कथन को सईद-बिन-जुबैर (रह॰) का हवाला देते हुए इसे उपरोक्त आयत की सबसे अच्छी टीका कहा है।[98]

क़ुरआन के टीकाकारों ने यह भी व्याख्या की है कि उपरोक्त तीनों कामों के मध्य हालाँकि अरबी स्वर 'वाव' लाया गया है, जो अरबी क़ायदे के अनुसार क्रमबद्धता का प्रमाण नहीं बनता, लेकिन संदर्भ और प्रसंग से क्रमबद्धता ही दिखाई पड़ती है।[99]

न मारना बेहतर है

जिस आयत पर बहस चल रही है, उसमें हालाँकि वक़्त की अत्यावश्यक स्थिति में, बीवियों को सुधारने और अदब सिखाने के लिए अलामत (लक्षण) के तौर पर मारने की इजाज़त दी गई है, लेकिन धर्म के क़ानून का आम मिज़ाज यह मालूम होता है कि जहाँ तक हो सके इससे बचा जाए। नबी (सल्ल॰) ने इसकी इजाज़त देने के बावजूद इसे नापसन्द फ़रमाया है, जैसा कि पिछले पृष्ठों में कुछ हदीसें लिखी गई हैं। इमाम शाफ़ई (रह॰) ने एक हदीस नक़ल की है जिसमें औरतों को मारने के हुक्म का ज़िक्र है। फिर लिखा है—

"इस हदीस से मालूम होता है कि अगरचे बीवियों को मारने की इजाज़त है, लेकिन बेहतर है कि उनको न मारा जाए।"[100]

आलूसी (रह॰) कहते हैं–

"यह बात छिपी नहीं है कि औरतों की तरफ़ से पहुँचनेवाली तकलीफ़ को बरदाश्त करना और उसपर सब्र करना उनको मारने से ज़्यादा बेहतर है, सिवाय इसके कि किसी बड़ी कोताही पर, मजबूरी की हालत में उन्हें मारना पड़ जाए।"[101]

अता (रह॰) कहते हैं–

"मर्द अपनी बीवी को किसी चीज़ का हुक्म दे या किसी चीज़ से रोके और वह उसका कहना न माने तो वह उसे न मारे, बस ग़ुस्सा दिखाए।"

इस कथन को लिखने के बाद क़ाज़ी इब्नुल-अरबी अल-मालिकी फ़रमाते हैं–

"यह अता की 'फ़िक़्ह' है। उन्होंने शरीअत की समझ और इज्तिहाद की वजहों की जानकारी रखने के आधार पर जान लिया कि आयत के मुताबिक़ मारना जाइज़ है, लेकिन हदीस से इसकी नाप़सन्दीदगी मालूम होती है।"

आगे फ़रमाते हैं–

"मेरे नज़दीक तमाम मर्दों और औरतों का मामला बराबर नहीं है। ग़ुलाम डण्डे खाकर सीधा रहता है जब कि आज़ाद के लिए इशारा काफ़ी होता है। बहुत-सी औरतें बल्कि बहुत-से मर्द भी ऐसे होते हैं जो सज़ा पाकर ही सीधे होते हैं। अगर आदमी को एहसास हो जाए कि तंबीह के बग़ैर कोई चारा नहीं, तो ऐसा कर सकता है, लेकिन इससे बचना बेहतर है।"[102]

मारने का हुक्म निन्दनीय नहीं

इस्लाम पर एतिराज़ करनेवालों ने क़ुरआन के इस हुक्म को आलोचना का निशाना बनाया है। उनके नज़दीक यह औरत की तौहीन और उसे रुसवा करना है कि कोई व्यक्ति, चाहे वह शौहर ही क्यों न हो, उसे मारे-

पीटे। ग़ौर करने की बात यह है कि क़ुरआन ने यह हुक्म उस सूरत में, जब अन्य उपाय नाकाम हो जाएँ, अत्यावश्यक औषधि के तौर पर दिया है। उसका यह हुक्म आम हालात और आम औरतों के लिए नहीं है, बल्कि उस ख़ास हालत के लिए है जब औरत बाग़ी हो जाए। मर्द से नफ़रत करने लगे, उसका कहना न माने और उसे अपने से नीचा समझने लगे। जिन लोगों को क़ुरआन का यह हुक्म औरत की तौहीन व उसे रुसवा करता हुआ मालूम होता है उन्हें औरत के बाग़ियाना तेवर और नाफ़रमानी पर आधारित रवैये में मर्द की तौहीन और उसे रुसवा करने का पहलू नज़र नहीं आता। मौलाना अब्दुल-माजिद दरियाबादी (मृ. 1397 हि./1977 ई.) ने लिखा है—

"क़ुरआन का सम्बोधन स्पष्ट है। लेकिन बार-बार इसे याद कर लेने की भी ज़रूरत है कि किसी एक वर्ग, किसी एक जाति, किसी एक संस्कृति से नहीं, इसका सम्बोधन हर वर्ग, हर स्तर, प्रत्येक विचार के लोगों, पहली शताब्दी हिजरी से लेकर क़ियामत तक हर ज़माने और हर दौर के लोगों से है और इसके आदेशों और नियमों में हर इनसानी ज़रूरत और हर इनसानी माहौल का लिहाज़ कर लिया गया है। अतः यह देखा जा चुका है कि बहुत-से समाज और वर्ग ऐसे हैं जहाँ औरत के लिए शारीरिक सज़ाएँ आम हैं। इलाज की यह सूरत, स्पष्ट है कि उन्हीं वर्गों के लिए है। फिर इतनी इजाज़त भी ज़रूरत पड़ने ही पर है, वरना सन्दर्भ नरमी अपनाने की ही सिफ़ारिश कर रहा है...क़ुरआन मजीद में इस हुक्म का मिलना, क़ुरआन मजीद के हक़ में ज़रा भी हानिकारक नहीं, जैसा कि कुछ यूरोप के प्रभाव में पड़े हुए मुसलमान समझ रहे हैं, बल्कि यह तो नितान्त दलील है इसकी कि क़ुरआन मजीद के आदेश हर वर्ग और हर मिज़ाज और हर स्तर के इनसानों के लिए हैं।"[103]

शैख़ मुहम्मद अब्दुह (मृ. 1323 हि.) लिखते हैं—

"औरतों को मारने का धार्मिक आदेश ऐसी चीज़ नहीं है, जो अक़्ल या फ़ितरत (प्रकृति) के हिसाब से इतना नापसन्दीदा हो कि उसकी

व्याख्या की ज़रूरत महसूस की जाए। इसकी ज़रूरत माहौल के फ़साद या बुरे आचरण के फैल जाने की स्थिति में पड़ती है और इसे उसी हालत में स्वीकृति दी गई है जब मर्द महसूस करे कि औरत की नाफ़रमानी इसके बग़ैर ख़त्म नहीं हो सकती। अगर माहौल ठीक हो और औरतें नसीहत को समझने और उपदेश को सुनने लगें या सम्बन्ध को तोड़ने और सरकशी अपनाने से रुक जाएँ तो मारने से बचना ज़रूरी है।"[104]

अल्लामा रशीद रज़ा (रह.) लिखते हैं–

"हमारे यहाँ सरकश औरत को मारने के धार्मिक आदेश पर पश्चिमी सभ्यता व समाज की नक़्ल करनेवाले बहुत-से लोग नाक-भौं चढ़ाते और नागवारी व्यक्त करते हैं। उन्हें इसपर कोई नागवारी नहीं होती कि औरत मर्द पर चढ़ जाए, उसपर अपनी बड़ाई जताए और घर के मुखिया को अपना नौकर बल्कि अपने से कमतर समझे, अपनी सरकशी पर अड़ी रहे, यहाँ तक कि न उसकी बात व नसीहत पर नरम पड़े, न उसकी बेरुख़ी और सम्बन्ध-विच्छेद की कोई परवाह करे। मुझे नहीं मालूम कि ये लोग ऐसी बाग़ी (उद्दण्ड) औरत का किस तरह से इलाज करते हैं और इनके पतियों को इनके साथ कैसा मामला करने की राय देते हैं। शायद उनकी कल्पना में एक ऐसी औरत होती है जो दुर्बल, कमज़ोर, सुसभ्य और ऊँची अख़लाक़वाली है, जिसपर एक बदमिज़ाज और पत्थर दिल मर्द ज़ुल्म ढाता है। अतः वह उसके तरो-ताज़ा गोश्त से अपने कोड़े का पेट भरता और उसके ताज़ा ख़ून से उसे तृप्त करता है और दावा करता है कि अल्लाह तआला ने उसे इस क़िस्म की मार मारने की इजाज़त दे रखी है और वह उसे चाहे कितनी ही तकलीफ़ पहुँचाए और कैसी ही सज़ा दे उसपर कोई गुनाह नहीं आता, जैसा कि बहुत-से पत्थर-दिल और सख़्त मिज़ाज मर्द करते हैं। अल्लाह की पनाह! अल्लाह इस ज़ुल्म की न इजाज़त देता है न उसे पसन्द करता है। यह सही है कि बहुत-से मर्द बदमिज़ाज और पत्थर-दिल

होते हैं, जो औरत पर अकारण जुल्म और अत्याचार करते हैं। ऐसे मर्दों को ख़बरदार करने के लिए बहुत-सी हदीसें मिलती हैं और उनके मामले में क़ुरआन करीम में 'तहकीम' (पंचायत) का उसूल बयान किया गया है। इसी तरह यह भी सही है कि बहुत-सी औरतें ज़बान-दराज़, उद्दण्ड और बहानेबाज़ होती हैं। वे अपने पतियों से नफ़रत करती हैं, उनके एहसानों की नाशुक्री करती हैं, सिर्फ़ दुश्मनी और शत्रुता में उनके आदेशों के प्रति सरकशी दिखाती हैं। उन्हें ऐसे कामों पर मजबूर करती हैं जो उनके बस में नहीं होते। धरती पर क्या फ़साद घटित हो जाएगा अगर किसी नेक और परहेज़गार मर्द को इजाज़त दे दी जाए कि वह किसी ऐसी औरत के हाथ पर एक दातुन मारकर या उसकी गर्दन पर एक चपत जड़कर उसकी दुश्मनी में कुछ कमी कर दे या उसकी सरकशी और घमंड का पारा कुछ उतार दे? अगर इस चीज़ का जाइज़ होना मिज़ाजों पर भारी गुज़रता है तो उन्हें मालूम होना चाहिए कि उनके मिज़ाजों में बिगाड़ आ गया है और उन्हें यह भी जान लेना चाहिए कि उनके बहुत-से अंग्रेज़ विद्वान पढ़ी-लिखी, सभ्य लिबास पहनने के बावजूद नंगी नज़र आनेवाली, दूसरों की तरफ़ आकर्षित होनेवाली और दूसरों को अकर्षित करनेवाली औरतों को मारते रहे हैं। ऐसा उनके विद्वानों ने भी किया है और धार्मिक पुरुषों ने भी, उनके हुक्मरानों ने भी किया है और उनके नेता-वर्ग के लोगों ने भी। यह ऐसी ज़रूरत है जिससे इन शिक्षित औरतों की इज़्ज़त बढ़ाने में अतिशयोक्ति करनेवाले बेनियाज़ नहीं हैं, तो एक ऐसे धर्म में उसकी ज़रूरत और उसके जाइज़ होने पर नागवारी को कैसे ज़ाहिर किया जा सकता है, जो असभ्य और सुसभ्य सभी वर्गों के लिए आम है।"[105]

मुस्लिम बुद्धिजीवियों की सोच

इस्लाम की इन शिक्षाओं में असाधारण सन्तुलन और तवाज़ुन पाया जाता है। इसने न औरत पर ग़लत जुल्म ढाने और हिंसा करने की इजाज़त दी है, न उसे खुली छूट दी है कि वह शौहर की जितनी चाहे नाफ़रमानी करे

मगर शौहर उसे कुछ न कहे। उसने एक तरफ़ शौहर को हुक्म दिया कि बीवी के साथ प्यार-मुहब्बत से पेश आए और अच्छा व्यवहार करे, दूसरी तरफ़ उसको इस बात की भी इजाज़त दी कि अगर बीवी की तरफ़ से सरकशी और बग़ावत ज़ाहिर होते देखे तो उसे अदब सिखाने और सुधारने के लिए सख़्ती करे। लेकिन कुछ मुस्लिम बुद्धिजीवी उपरोक्त आयत की इस व्याख्या और टीका से सहमत नहीं। वे ग़ैरों के इस एतिराज़ से बचना चाहते हैं कि इस्लाम ने शौहर को अपनी बीवी से मार-पीट करने का इख़्तियार दिया है, अतः वे इस आयत की ऐसी व्याख्या करते हैं जिसका उससे दूर का भी सम्बन्ध नहीं।

मुनासिब मालूम होता है कि आगे की पंक्तियों में उनकी व्याख्याओं का भी जाइज़ा ले लिया जाए।

(1) पाकिस्तान के कोई साहब अहमद अली हैं। जिन्होंने अल-क़ुरआन ए कन्टेम्पोररी (Al-Qur'an A Contemporary Translation) के नाम से क़ुरआन करीम का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है। उपरोक्त आयत का उन्होंने यह अनुवाद किया है—

"As for women you feel are averse, talk to them suasively; then leave them alone in bed (without molesting them) and go to bed with them (when they are willing)."[106]

अर्थात "और जो औरतें तुम्हें बेज़ार और घृणा करनेवाली महसूस हों, तुम उनसे समझाने-बुझाने के अन्दाज़ में बात करो, फिर उन्हें बिस्तर पर अकेला छोड़ दो (बग़ैर उन्हें सताए) और उनके साथ बिस्तर पर जाओ (जब वे चाहें)।"

अनुवाद में जो अस्पष्ट था उसे अनुवादक ने फ़ुटनोट में खोल दिया है— Have intercourse (यानी उनसे सम्भोग करो), फिर दावा करते हैं कि तीनों शब्दों के जो अर्थ उन्होंने बताए हैं, वही अर्थ राग़िब अस्फ़हानी, इब्ने-मन्ज़ूर और ज़मख़्शरी के नज़दीक भी मुराद है। ख़ास तौर से 'ज़रब' का अर्थ 'सम्भोग' राग़िब, अस्फ़हानी और इब्ने-मन्ज़ूर दोनों ने बयान किया है। आख़िर में लिखते हैं—

"यहाँ 'वज़रिबूहुन-न' का मतलब उनको यानी 'औरतों को मारो' लिया ही नहीं जा सकता। इस मत का समर्थन पैग़म्बर (सल्ल॰) की प्रमाणित हदीसों से होता है, जो हदीस की विश्वसनीय किताबों– जिनमें बुख़ारी व मुस्लिम सम्मिलित हैं, में मौजूद हैं। जैसे–"तुममें से कोई अपनी पत्नी को इस तरह न मारे, जिस तरह ग़ुलाम को मारता है कि फिर शाम को उसके साथ हमबिस्तरी (सम्भोग) करेगा।" इस विषय की अन्य हदीसें अबू-दाऊद, नसई, इब्ने-माजा, अहमद और अन्य किताबों में उद्धृत हैं जिनसे मालूम होता है कि आप (सल्ल॰) ने किसी भी औरत को मारने से मना किया है– "अल्लाह की बन्दियों को न मारो"[107]

हक़ीक़त यह है कि मनगढ़ंत अर्थों का सम्बन्ध ज़मख़्शरी, राग़िब अस्फ़हानी और इब्ने-मन्ज़ूर से जोड़ना उनपर तोहमत (इलज़ाम) लगाना है। अगर स्वीकार भी कर लिया जाए कि 'ज़रब' के बहुत-से अर्थों में से एक का अर्थ 'सम्भोग' भी आता है, तो क्या इस आयत में भी यह अर्थ लिया जा सकता है? आयत में पत्नी को 'नुशूज़' यानी सरकशी पर सुधार के उपायों का बयान हो रहा है और 'वज़रिबूहुन-न' का अनुवाद यह किया जा रहा है कि उनसे सम्भोग करो जब वे चाहें। अनुवादक को यह भी बताना चाहिए कि इसमें कौन-सी सुधारवाली बात हुई?

(2) क़ुरआन का एक अंग्रेज़ी अनुवाद तुर्की से प्रकाशित हुआ है। उसे "Qur'an : A Reformist Translation" का नाम दिया गया है। अनुवाद करनेवालों की हैसियत से उसपर तीन लोगों का नाम लिखा है–Edip Yuksel, Layth Saleh Al-Shaiban, Martha Schulte-Nateh. इसमें 'वज़रिबूहुन-न' का अनुवाद and separate them (और उन्हें अलग कर दो) किया गया है।[108]

(3) एक और अंग्रेज़ी अनुवादक हैं जिन्होंने इस आयत का अनुवाद " and threaten them" यानी "और उन्हें धमकी दो" किया है।[109]

किसी शब्द का जो भी दिल में आए अर्थ ले लिया जाए, चाहे शब्दकोश

और अरबी बोलचाल में कभी उसके वे अर्थ लिए गए हों या न लिए गए हों, यह क़ुरआन के साथ खुला मज़ाक़ नहीं तो और क्या है? इसी रवैये पर अल्लामा इक़बाल ने लिखा था—

'ख़ुद बदलते नहीं क़ुरआँ को बदल देते हैं'

(4) कुछ विद्वान वार्ताधीन इस आयत में शब्द 'ज़रब' को उसके जाने-माने अर्थ से फेरकर उसे दूसरा अर्थ पहनाते हैं। वे कहते हैं कि यहाँ 'ज़रब' से मुराद 'ज़-र-ब म-स-लन' है, यानी मिसालें बयान करना। गुलाम अहमद परवेज़ ने इस मनगढ़त अर्थ की तरफ़ इशारा करते हुए इसकी कमज़ोरी स्पष्ट की है। लिखते हैं—

'ज़-र-ब मसलन' का अर्थ है मिसाल के ज़रिए से बात को स्पष्ट कर देना। लेकिन कुछ जगहों पर सिर्फ़ 'ज़-र-ब' का भी यही अर्थ होता है, जैसे—'कज़ालि-क यज़रिबुल्लाहुल-हक़-क़-वल् बाति-ल' (इस तरह अल्लाह सत्य और असत्य की व्याख्या करता है या बात को समझाता है) हालाँकि (जैसा कि ऊपर लिखा गया है) इसका अर्थ 'सत्य और असत्य का संघर्ष' भी होता है। इसी तरह क़ुरआन की सूरा-43 'ज़ुख़रुफ़' में है : 'माज़-र-बूहु ल-क इल्ला जदलां' [ये लोग तुझे बात नहीं समझाते (मिसाल पेश नहीं करते) बल्कि सिर्फ़ झगड़ा करते हैं] इससे (कुछ लोगों का ख़याल है कि) क़ुरआन की सूरा-4 'निसा' में जो औरतों से सम्बन्धित है कि 'वज़रिबूहुन्-न' तो इसका अर्थ है विभिन्न तरीक़ों से मिसालें देकर उन्हें समझाओ अर्थात 'वज़रिबूलहुन-न मसला। लेकिन यह अर्थ इसलिए कमज़ोर है कि समझाने के लिए इससे पहले 'फ़अिज़ूहुन-न' आ चुका है।''[110]

(5) मौलाना उमर अहमद उसमानी कहते हैं—

''इस आयत में दूसरी ग़ौर करने की बात यह है कि यहाँ सम्बोधन शौहर-बीवी से नहीं है, बल्कि समाज से है...अतः घर का बड़ा बुज़ुर्ग, ख़ानदान का मुखिया, ज़िम्मेदार, बाप, भाई ये सभी इस सम्बोधन में आ जाते हैं कि वे पहले औरत को नसीहत करें, उसे

उसके सोने के कमरे में अकेला छोड़ दें। इन बातों से उसका सुधार न हो तो उसे शारीरिक सज़ा दें जो कष्टदायक न हो, शर्त यह है कि मामला खुली बेशर्मी और बदचलनी का न हो।''[11]

कोई मौलाना से पूछे कि शौहर तन्हाई में बीवी को डाँट-फटकार करे और हल्की-सी जिस्मानी सज़ा दे, यह बात औरत के लिए ज़्यादा तकलीफ़ पहुँचानेवाली होगी या बाप-भाई उसकी ससुराल में आकर उसकी पिटाई करें या उसका कोई ज़िम्मेदार एलानिया उसे जिस्मानी सज़ा दे। इसमें से उसे किसमें अपनी बेइज़्ज़ती व तौहीन ज़्यादा महसूस होगी? मौलाना से यह बात भी पूछने का जी चाहता है कि घर का कोई बुज़ुर्ग या शौहर के अलावा कोई दूसरा व्यक्ति औरत को उसके सोने के कमरे में अकेला छोड़ दे, इसमें औरत के तादीब (सुधार) का कौन-सा पहलू हुआ? सुधार तो इस सूरत में होगा जब शौहर उससे अपनी मुहब्बत की नज़र फेर ले और पास रहते हुए भी उसकी तरफ़ ध्यान न दे। शैख़ रशीद रज़ा (रह॰) ने इस पहलू पर बहुत अच्छी रौशनी डाली है। उन्होंने आयत के टुकड़े 'वह्जुरुहुन-न फ़िल मज़ाजिअ' की व्याख्या में टीकाकारों के बहुत-से कथनों पर आलोचना करते हुए लिखा है—

"क़ुरआन कहता है 'शयन-कक्षों में उनसे सम्बन्ध तोड़ लो', यह चीज़ न बिस्तर छोड़ देने से हासिल होगी और न कमरा, बल्कि यह चीज़ उस वक़्त हासिल होगी, जब बिस्तर में उनके साथ रहते हुए उनसे कोई सम्बन्ध न रखा जाए। बिस्तर या कमरा छोड़ना सज़ा में ज़्यादती है, जिसका अल्लाह ने हुक्म नहीं दिया है। बल्कि कभी-कभी यह चीज़ बेरुख़ी और नफ़रत में ज़्यादती का सबब बनेगी। बिस्तर में रहते हुए कोई सम्बन्ध न रखने से जो फ़ायदा हासिल होता है, वह बिस्तर या घर छोड़ देने से हासिल नहीं होगा। बिस्तर में एक साथ रहने से यौन भावनाएँ उभरती हैं। शौहर-बीवी में से हर एक को दूसरे से सुकून मिलता है और हादसों के नतीजे में पैदा होनेवाली बेचैनियाँ दूर होती हैं। अगर इस हाल में मर्द औरत से ताल्लुक़ तोड़े रखेगा और उससे बचेगा तो उम्मीद है कि यौन भावनाएँ और मनोवैज्ञानिक सुकून औरत को मर्द से इसका

सबब पता करने पर आमादा करेगा और वह विरोध करने की बुलन्द ज़मीन से उतरकर अनुकूलता के समतल पर आ जाएगी।"[112]

(6) जनाब गुलाम अहमद परवेज़ भी शौहर को यह हक़ नहीं देते कि वह अपनी बीवी को शारीरिक सज़ा दे सके, बल्कि उसे वे अदालत का काम ठहराते हैं। अपनी किताब 'लुग़ातुल-क़ुरआन' में उन्होंने शब्द 'ज़रब' के विभिन्न प्रयोग और उनके अर्थ बताए हैं। इस बारे में, उपरोक्त आयत जिसके बारे में बात चल रही है, के हवाले से लिखते हैं—

"'फ़ज़रिबूहुन-न' से मुराद वह जिस्मानी सज़ा (Corporal Punishment) है जो अदालत की तरफ़ से कुछ जुर्मों की सज़ा में दी जाती है। औरतों का बिना वजह अपनी फ़ितरी ज़िम्मेदारियों (सन्तान पैदा करना) की अवहेलना करना और मर्द बनने की इच्छा करना (जैसा कि यूरोप में हो रहा है) एक सामाजिक अपराध है, जिसको अदालत के द्वारा रोका जाना ज़रूरी है।"[113]

इस सिलसिले में भी यही बात कही जाएगी कि शौहर-बीवी की किसी अवज्ञा या सरकशी पर चेतावनी और तंबीह के तौर पर उसे अकेले में हल्के हाथ से एक-दो चपत लगा दे। यह इसके मुक़ाबले में कहीं हल्की सज़ा है कि वह उसका मामला अदालत में ले जाए। वहाँ उसकी नाफ़रमानी और सरकशी की घटनाएँ बयान करे और उनके सुबूत और गवाही पेश करके खुलेआम उसकी रुसवाई का सामान जुटाए। जो लोग शौहर के हाथों औरत को हल्की-से-हल्की सज़ा भी देने के पक्ष में नहीं हैं, वे अनजाने में इससे कहीं ज़्यादा भारी सज़ा देने की वकालत करने लगते हैं।

सारांश यह कि इस्लाम ने यद्यपि मर्दों को अधिकार दिया है कि वे अत्यावश्यक परिस्थिति में अपनी बीवियों की तंबीह और डाँट-डपट कर सकते हैं, लेकिन साथ ही उनपर इतनी पाबन्दियाँ भी लगा दी हैं कि ज़ुल्म-ज़्यादती और हिंसा के सारे दरवाज़े बन्द हो जाते हैं।

सन्दर्भ (हवाले)

1. http://www.usdoj.gov/ovw/domviolence.htm
2. http://www.cafcass.gov.uk/English/publications/consultations/04 DecDv%20policy.pdf
3. Foreword on WHO Multi-Country Study on Women's Health and Domestic Violence against Women
4. Foreword on WHO Multi-Country Study on Women's Health and Domestic Violence against Women
5. National Violence against Women Survey (2000) available at http://www.ojp.usdoj.gov/nij/pubs-sum/183781.htm
6. US Deptt. of Justice NCJ 207846, Bureau of Justice Statistics, Family Violence Statistics: including Statistics on Stranger and Acquaitance, at 31-32 (2005) available at : http://www.ojp/usdoj.gov/bjs/pub/pdf/fvs.pdf
7. Women's Aid Fedration [England] Report, 1992
8. Domestic Violence-Action for Change, G.H-ague & E Malos 1993
9. Crime in England and Wales 2006/2007 report
10. http://498a.wordpress.com, http://victims-of-law.blogspot.com
11. UN Report, 13th Oct.2009 (Press Trust of India)
12. इस विषय पर अधिक जानकारी के लिए पढ़ें मौलाना जलालुद्दीन उमरी की किताबें– मुसलमान औरत के अधिकार और उनपर एतिराज़ात का जायज़ा, औरत इस्लामी समाज में, औरत और इस्लाम तथा इस्लाम का आइली निज़ाम, प्रकाशक : मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली-25
13. अल-मोजमुल-वसीद, अल-क़ामूसुल-वहीद : मौलाना वहीदुज़्ज़माँ कैरानवी
14. तफ़हीमुल-क़ुरआन : 1/349 (मौलाना सैयद अबुल-आला-मौदूदी)
15. तदब्बुरे-क़ुरआन : 2/291 (मौलाना अमीन अहसन इस्लाही)
16. तफ़्सीरे-माजिदी : 1/730 (मौलाना अब्दुल-माजिद दरियाबादी)
17. अलक़ामूसुल-मुहीत : 474 (फ़िरोज़ाबादी)
18. ताजुल-उरूस (ज़ुबैदी)
19. लिसानुल-अरब : 12/503 (इब्ने-मन्ज़ूर)
20. उपरोक्त
21. अल-बहरुल-मुहीत : 3/235 (अबू-हय्यान)
22. अल-जामअ्-उल-अहकामुल-क़ुरआन : 5/169 (क़ुरतुबी)

23. तफ़्सीरे-बग़वी : 1/432

24. तफ़्सीरे-तबरी : 8/290

25. तफ़्सीरे-मावरदी :1/385, बग़वी : 1/432, तफ़्सीरे-जिलालैन : 106, (सुयूती, महल्ली)

26. अल-कश्शाफ़ अन-हक़ाइक़ अत-तन्ज़ील : 1/523 (ज़मख़्शरी)

27. देखिए—तफ़्सीरे-बैज़ावी : 1/182, नासिरुद्दीन बैज़ावी तफ़्सीरे-नसफ़ी : 3/128, तफ़्सीरे-अबू-सऊद, तफ़्सीरे-नज़मुद्दुरर वस्सुवर : 5/269, बुरहानुद्दीन बक़ाई : 1/173, मुहम्मद-बिन-मुहम्मद आलूसी रूहुल-मआनी : 5/23 महमूद आलूसी

28. राज़ी, तफ़्सीरुल-कबीर : 10/80

29. उपरोक्त

30. इब्ने-कसीर तफ़्सीरुल-क़ुरआनिल-अज़ीम : 1/641

31. बैज़ावी : 1/282, बक़ई : 5/270, अबुल-सऊद : 173, आलूसी : 5/23, मुहम्मद रशीद रज़ा : तफ़्सीरुल-मिनार 5/69, क़ाज़ी मुहम्मद सनाउल्लाह अल-उसमानी (पानीपती) अत-तफ़्सीरुल-मज़हरी : 2/294

32. अबू-हय्यान : 3/335

33. तदब्बुरे-क़ुरआन : 2/291-292

34. तफ़्हीमुल क़ुरआन : 1/349

35. इब्ने-कसीर : 1/641

36. देखिए—जस्सास अहकामुल-क़ुरआन : 1/229, मावरदी : 1/385, क़ुरतुबी : 5/169, बक़ाई : 5/269, सुयूती : पृष्ठ 106

37. जस्सास : 1/229, मावरदी : 1/385, क़ुरतबी : 5/169, बक़ाई : 5/269, सुयूती : 106

38. राज़ी : 10/80

39. बग़वी : 1/432, ज़मख़्शरी : 1/523, बैज़ावी : 1/182, नसफ़ी : 3/128, ख़ाज़िन : 1/432, आलूसी : 5/23, पानीपती : 2/294, थानवी : 1/115, उसमानी : 108, 2/294, नईमुद्दीन मुरादाबादी : 133

40. क़ुरतुबी : 5/169, 3/124

41. रशीद रज़ा : 5/69,70

42. रशीद रज़ा : 5/68-69

43. रशीद रज़ा : 5/70

44. रशीद रज़ा : 5/67-68

45. जस्सास : 1/229

46. इस्लाम का आइली निज़ाम, सै. जलालुद्दीन उमरी पृष्ठ : 126-127
47. रशीद रज़ा : 5/68
48. देखें– सूरा-2 बक़रा, आयत-116, 238, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-17; 43, सूरा-16 नहल, आयत-20; सूरा-33 अहज़ाब, आयत-31-35; सूरा-30 रूम, आयत-26; सूरा-33 ज़ुमर, आयत-9, सूरा-66 तहरीम, आयत-12
49. तबरी : 8/294, जस्सास : 1/229, ख़ाज़िन : 1/433, अबू-हय्यान : 3/337, आलूसी : 5/24
50. राज़ी : 10/81
51. उपरोक्त
52. ज़मख़्शरी : 1/524
53. इब्ने-अतिय्या अल-मुहर्ररुल-वजीज़ : 2/47 बहवाला अबू-हय्यान : 3/337
54. आलूसी : 5/24
55. रशीद रज़ा : 5/71
56. उपरोक्त
57. इस्लाही : 2/292
58. अबू-हय्यान : 3/337
59. रशीद रज़ा : 5/75-76
60. इब्ने-क़सीर : 1/643
61. अल-मौसुअतुल-फ़िक़्हि-य्या : 2001 : 40/305-306
62. तबरी : 8/229, इब्ने-मन्ज़ूर : 5/418, फ़िरोज़ाबादी : पृ. 474, इब्ने-दरीद अज़दी : 3/2, राज़ी : 10/82, क़ुरतबी : 5/170, ख़ाज़िन : 1/433, इब्ने-तैमिया : 14/211, फ़तावा शैख़ुल-इस्लाम : 14/211
63. जौहरी : ताजुल्लुग़ात : 1/438
64. इब्ने-ज़ौज़ी के हवाले से : 2/218
65. इब्ने-मन्ज़ूर : 5/418
66. मावरदी : 1/426
67. अबू-हय्यान : 3/515
68. अल-जौहरी : 1/438, फ़िरोज़ाबादी : पृ. 474
69. इब्ने-फ़ारस, मोजम मक़ायीत अल-लुग़ह : पृ. 430-431
70. इब्ने-मन्ज़ूर : 5/418

71. राग़िब असफ़हानी, अल-मुफ़र्रदात फ़ी ग़रीबुल-क़ुरआन : पृ॰ 495
72. क़ुरतबी : 5/170-171
73. ख़ाज़िन : 1/433
74. अबू-हय्यान : 3/340
75. इब्ने-कसीर : 1/642
76. इस्लाही : 2/292-293
77. राज़ी : 10/82, ख़ाज़िन : 1/433, नज़्म अद्दरर फ़ी तनासुबुल-आयात वल-सौर : 5/271
78. अबू-हय्यान : 3/340
79. रशीद रज़ा : 5/76
80. मावरदी : 1/387, इब्नुल-जौज़ी : 2/76, इब्नुल-अरबी अल-मालिकी, अहकमुल-क़ुरआन : 1/175, क़ुरतबी : 5/171-172, अबू-हय्यान : 3/340-341, आलूसी : 5/25
81. तबरी : 8/309
82. ज़मख़्शरी : 1/524-525
83. इब्नुल-अरबी : 1/175
84. उपरोक्त
85. रशीद रज़ा : 5/73
86. इब्ने-असीर, अल-निहाया फ़ी ग़रीबुल-हदीस : 1/70
87. अबू-हय्यान : 3/341
88. तबरी : 8/314
89. राज़ी : 10/83
90. मौदूदी : 1/350
91. शब्बीर अहमद उसमानी, तर्जमा क़ुरआनुल-करीम : पृ॰ 109
92. इस्लाही : 2/293
93. राज़ी : 10/83
94. इब्ने-अतिय्या : 20/48, अबू-हय्यान : 3/342 के हवाले से
95. बैज़ावी : 1/182
96. आलूसी : 5/25
97. इब्ने-जौज़ी : 2/79

98. इब्नुल-अरबी : 1/175, मावरदी : 1/387, ज़मख़्शरी : 1/524, नसफ़ी : 1/129, शौकानी फ़तहुल-क़दीर : 1/461

99. राज़ी : 10/83, इब्ने-मुनीर : 1/524, अल-कश्शाफ़ : 1/524रशीद रज़ा : 5/76-77

100. राज़ी : 10/82

101. आलूसी : 5/25

102. इब्नुल-अरबी : 1/176

103. अब्दुल माजिद दरियाबादी : तफ़्सीरे-माजिदी : 1/733। मौलाना ने अपनी अंग्रेज़ी टीका में यूरोप में पत्नियों की मार-पीट के दस्तूर के हवाले दिए हैं। देखिए : Holy Qur'an, Translation & Commentary by M.Abdul Majid Daryabadi, Lucknow, 1981, vol : 1, pp: 327-328

104. रशीद रज़ा : 5/75

105. रशीद रज़ा : 5/74-75

106. Al-Qur'an : A Contemporary Translation by Ahmad Ali Princeton University Press Princeton, New Jersey

107. उपरोक्त

108. Qur'an : A Reformist Translation, Brainbow Press, U.S.A.

109. The Meaning of the Qur'an, Meaning Translated by M.A.K. Pathan, Crescent Publication, Pune, India.

110. गुलाम अहमद परवेज़, लुग़ातुल-क़ुरआन : 3/1064

111. मौलाना उमर अहमद उसमानी, फ़िक़्हुल-क़ुरआन : 3/81-82

112. रशीद रज़ा : 5/73

113. गुलाम अहमद परवेज़, लुग़ातुल-क़ुरआन : 3/1064

कुछ अहम किताबें

औरत और इस्लाम	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी
औरत और प्राकृतिक नियम	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
आदाबे-ज़िन्दगी	मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ इस्लाही
ईसा मसीह और मरयम क़ुरआन के दर्पण में	मुहम्मद जैनुलआबिदीन मंसूरी
इस्लाम में औरत का स्थान और मुस्लिम पर्सनल लॉ	प्रो॰ उमर हयात ख़ाँ ग़ौरी
इस्लाम में पाकी और सफ़ाई	नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
इस्लाम में पति-पत्नी के अधिकार	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
इस्लामी शरीअत	माइल ख़ैराबादी
क्या परदा मुल्क की तरक़्क़ी में रुकावट है	सैयदा परवीन रिज़वी
दीनियात	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
नारी और इस्लाम	मक़बूल अहमद फ़लाही
नमाज़	मौलाना नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
नेकियों का गुलदस्ता	साजिदा फ़रज़ाना सादिक़
प्यारी माँ के नाम इस्लामी सन्देश	मौलाना नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
प्यार के चिराग़ (कहानियाँ)	अबरार मोहसिन
परदा	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
मीरास का बँटवारा और उसके हक़दार	मिर्ज़ा सुबहान बेग
मुस्लिम औरतों की ज़िम्मेदारियाँ	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी
मुस्लिम लड़कियों की शिक्षा समस्या...	उमर अफ़ज़ल
रमज़ान कैसे गुज़ारें ?	ख़ुर्रम मुराद
रोज़ा और उसका अस्ली मक़सद	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
लिंगभेद और इस्लाम	डॉ॰ फ़ज़लुर्रहमान फ़रीदी
स्त्री और पुरुष में समानता की वास्तविकता	बुशरा सादिक़ा
सहाबियात के हालात	माइल ख़ैराबादी
प्यारे नबी (सल्ल॰) की पाक बीवियाँ	तालिब हाशिमी
आख़िरत का सामान	अबू-बक्र इस्लाही

आख़िरी पैग़म्बर	सैयद मुहम्मद इक़बाल
आदर्श इस्लामी शासन	इमामुद्दीन रामनगरी
आधुनिक नारी	नुज़हत यासमीन
इतिहास के साथ यह अन्याय!!	डॉ. बी. एन. पाण्डेय
इस्लाम : एक अध्ययन	डॉ. जमीला आली जाफ़री
इस्लाम : एक परिचय	इमामुद्दीन रामनगरी
इस्लाम : एक परिचय	ज़ियाउल-हसन उस्मानी
इस्लाम : एक सामान्य परिचय	शेख़ अली तनतावी (रह.)
इस्लाम : एक मात्र रास्ता	मुहम्मद ज़ैनुल-आबिदीन मंसूरी
इस्लाम : एक स्वयंसिद्ध ईश्वरीय जीवन-व्यवस्था	राजेन्द्र नारायण लाल
क़ुरआन की शिक्षाएँ	ज़ियाउल-हसन उस्मानी
क़ब्र की पुकार	मौलाना अब्दुर्रशीद उस्मानी
क़ुरआन और हम मुसलमान	नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
क़ुरआन का पैग़ाम	ख़ुर्रम मुराद
क़ुरआन की शीतल छाया	एम. ज़ियाउर्रहमान आज़मी
क़ुरआन की शिक्षाएँ आज के माहौल में	वारिस मज़हरी
क़ुरआन पर अनुचित आक्षेप	नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
ख़ुत्बए-निकाह	डॉ. फ़रहत हुसैन
क़ुरआन पुकारता है 'ऐ लोगो!"	ज़ैनुल-आबिदीन मंसूरी
क़ुरआन मजीद : अन्तिम ईशग्रंथ	डॉ. इल्तिफ़ात अहमद इस्लाही
कुल्लियाते-हफ़ीज़ मेरठी	हफ़ीज़ मेरठी
ग़लतफ़हमियों का निवारण	डॉ. ज़ाकिर नाइक
तोहफ़ा (बाल कहानियाँ)	ज़ैबुन्निसा हया
तौहीद : क़ुरआन की छाया में	सैयद ज़हूरुल हसन
धर्म का वास्तविक स्वरूप	डॉ. मक़सूद आलम सिद्दीक़ी

सम्पूर्ण पुस्तक सूची मुफ़्त मँगाएँ